श्री गुरुजी : बोधकथा

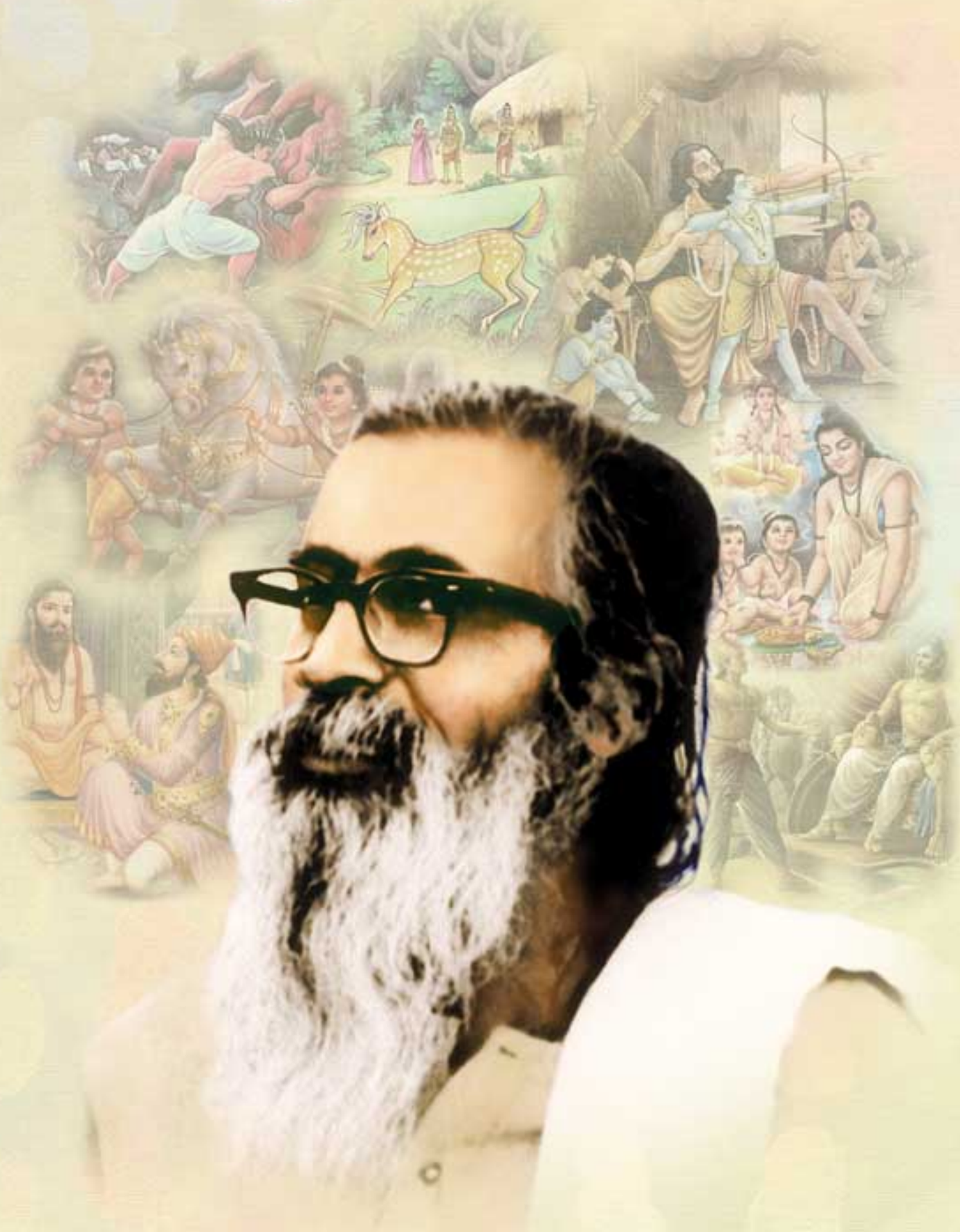

संकलनकर्ता

विजय कुमार

श्री गुरुजी : बोधकथा

संकलन कर्ता
विजय कुमार

सन् 1943 में दीवाली के दिन पूज्य श्री गुरुजी हैदराबाद (सिंध) के एक कार्यक्रम में उपस्थित थे। वहाँ के कार्यकर्ताओं ने उन्हें पुष्पमाला पहनाना चाहा जिसपर श्री गुरुजी ने कहा, ''यह पुष्प माला किसलिए? इसकी आज हमें आवश्यकता नहीं। हम तो भारत माता की पूजा करने चले हैं। माता को हमारा समर्पण चाहिए। उसके लिए हम तैयार हों।''

अपना मन ठीक रखें

अनेक लोग सोचते हैं कि उन्होंने बहुत कुछ पढ़ और सीख लिया, बहुत अनुभव प्राप्त कर लिये। अब उन्हें और कुछ सीखने की आवश्यकता नहीं है। पर ऐसा व्यक्ति कब स्खलित हो जाएगा, कहा नहीं जा सकता। इसलिए अपने मन को सदा ठीक बनाये रखने के लिए प्रतिदिन प्रयास और अभ्यास करते रहना चाहिए।

इस संबंध में श्री गुरुजी रामकृष्ण परमहंस के गुरु श्रद्धेय तोतापुरी जी महाराज का एक संस्मरण सुनाते थे। एक बार परमहंस जी ने उनसे पूछा, ''गुरुजी, आपने तो इतनी साधना और आराधना की है। आपको ब्रह्म की प्राप्ति भी हो गयी है। फिर अब आप प्रतिदिन आसन लगाकर क्यों बैठते हैं ? अब आपको पूजा-पाठ या अध्ययन की क्या आवश्यकता है ?''

तोतापुरी जी ने उत्तर दिया, '' अपने मन में कभी भी यह अभिमान नहीं आना चाहिए कि मैंने सब कुछ पा लिया। अपनी साधना प्रतिदिन नियमित रूप से चलती रहनी चाहिए।''

उन्होंने अपने लोटे को दिखाते हुए कहा, ''रामकृष्ण ! यह लोटा इतना साफ है कि तुम इसमें अपना मुँह देख सकते हो। मैं इसे प्रतिदिन रेत से रगड़कर माँजता हूँ। यदि ऐसा न करूँ, तो इस पर दाग पड़ जायेंगे और इसका पानी भी पीने योग्य नहीं रहेगा।

इसी प्रकार अपने मन को भी साधना और आराधना से प्रतिदिन साफ करना चाहिए। मुझे अब कुछ करने की आवश्यकता नहीं, यह अभिमान व्यर्थ है।''

.....

कमजोर के सब दुश्मन

किसी भी व्यक्ति और समाज को शक्तिशाली क्यों होना चाहिए, इस संबंध में श्री गुरुजी ब्रह्मा और मेमने वाली कथा सुनाते थे।

एक बार एक मेमना ब्रह्मा जी के पास गया और रो-रोकर अपनी व्यथा बताने लगा। वह बोला, '' महाराज, आप इस सृष्टि के निर्माता हैं। आपने सब जीवों को बनाते समय प्रत्येक को सुरक्षा के लिए कुछ साधन दिये हैं। किसी को नाखून दिये हैं, तो किसी को सींग या दाँत। साँप के पास जहर है, इसलिए लोग उससे भी डरते हैं। पर हमें आपने ऐसी कोई चीज नहीं दी। इस कारण जो चाहे हमें मारकर खा जाता है।''

ब्रह्मा जी आँख बंदकर उसकी बात सुनते रहे। उन्हें मौन देखकर मेमने ने फिर कहा, '' कृपया बतायें कि आपने हमें इतना कमजोर क्यों बनाया ? यह हमारे साथ बहुत बड़ा अन्याय है। महाराज, कृपाकर इससे बचने का कोई मार्ग बतायें।'' इतना कह कर मेमना फिर रोने लगा।

ब्रह्मा जी ने कहा, '' पुत्र, तुम्हारा कहना ठीक ही है। यह मेरी भूल ही है कि तुम्हें इतना निर्बल और निःशस्त्र बनाया। पर अब तुम शीघ्र ही यहाँ से चले जाओ। क्योंकि तुम्हें देखकर मेरा मन भी मचलने लगा है। ऐसा न हो कि मैं ही तुम्हें खा जाऊँ।''

यह कथा सुनाकर श्री गुरुजी बताते थे कि जिसके पास अपनी ताकत नहीं है, वह सदा प्रताड़ित ही किया जाता है।

.....

मित्रता की कसौटी

आजकल हर देश दूसरे शक्तिशाली देशों को अपना मित्र बनाना चाहता है। उस देश को लगता है कि शक्तिशाली मित्रदेश के बल पर वह शत्रुओं से अपनी रक्षा कर पायेगा। पर कोई भी देश निःस्वार्थ भाव से दूसरे की सहायता नहीं करता। वह अपनी सहायता की पूरी कीमत वसूल करता है। इसलिए दूसरे देशों से संबंध बनाते समय अपनी शक्ति का आकलन अवश्य करना चाहिए। इस बारे में श्री गुरुजी घोड़े और आदमी की कथा सुनाते थे।

कहते हैं कि घोड़ा पहले पालतू जानवर नहीं था। वह जंगलों में मुक्त अवस्था में घूमा करता था। एक बार किसी बात पर शेर से उसका झगड़ा हो गया। घोड़ा शेर की अपेक्षा कम बलवान था। वह डरकर भागा। शेर उसका पीछा करने लगा। भागते-भागते घोड़े को एक आदमी दिखायी दिया।

घोड़े ने बड़े कातर भाव से आदमी से प्रार्थना की कि वह उसे शेर के आतंक से मुक्ति दिलाये। आदमी ने कहा, '' मैं तुम्हारी रक्षा करने के लिए शेर से लड़ तो सकता हूँ; पर मेरी गति शेर से कम है, इसलिए मुकाबला कठिन है।''

घोड़े ने कहा कि यदि वह उसकी पीठ पर सवार हो जाये, तो उसकी गति बढ़ जायेगी। आदमी ने घोड़े की पीठ पर सवार होकर शेर को पराजित कर दिया। घोड़े की रक्षा हो गयी।

घोड़े ने आदमी को धन्यवाद देते हुए बड़े कृतज्ञ भाव से कहा, ''आपने मुझ पर और मेरी भावी पीढ़ियों पर बड़ा उपकार किया है। हम इसे कभी भूल नहीं सकते। अब कृपया मेरी पीठ से उतरने का कष्ट करें, जिससे मैं स्वतन्त्र रूप से जंगल में घूम सकूँ।''

इस पर आदमी ने कहा, ''भाई घोड़े जी, तुम्हारी बात तो ठीक है; पर तुम्हारी पीठ पर बैठने में मुझे इतना आनंद आया है कि अब उतरने की इच्छा नहीं होती।'' कहते हैं कि तब से आज तक आदमी घोड़े की पीठ से उतरा नहीं है।

यह कथा सुनाकर श्री गुरुजी बताते थे कि हम चाहे अमरीका से मित्रता करें या रूस से; पर वे अपनी शर्तें हम पर जरूर थोपेंगे। काम निकल जाने के बाद केवल प्रेमवश वे हमारी पीठ से नहीं उतरेंगे। इसलिए दूसरों की मित्रता पर निर्भर रहने की अपेक्षा अपनी शक्ति ही बढ़ानी चाहिए।

.....

यह कैसी एकात्मता

प्रायः लोग समता और समानता, एकता और एकात्मता, प्रेम और विश्वबंधुत्व की बड़ी-बड़ी बातें करते हैं; पर उनके मन में यह भाव नहीं होता। इसे स्पष्ट करने के लिए श्री गुरुजी अपने एक विद्वान मित्र की कथा सुनाते थे।

उन विद्वान सज्जन ने सोचा कि यह संघ कार्य के लिए पूरे देश में घूमता है, यदि इसके मन में समाज के हर वर्ग के प्रति प्रेम न हो, तो यह सफल नहीं हो पाएगा। इसलिए उन्होंने मुझसे पूछा, ''तुम कुछ अद्वैत सिद्धान्त के बारे में जानते हो ?''

''यह क्या होता है ?'' मैंने कहा।

''शंकराचार्य जी ने इसे प्रतिपादित किया था।''

''कौन शंकराचार्य जी ?'' मैंने अज्ञानता प्रकट की।

वे समझ गये कि मैं इस मामले में काफी पीछे हूँ। इसलिए उन्होंने मुझ पर दया दिखाते हुए कहा, ''आदिगुरु शंकराचार्य और उनके अद्वैत सिद्धान्त को समझे बिना तुम संघ का काम नहीं कर पाओगे।''

''तो क्या किया जाये ?'' मैंने पूछा।

''इसे पढ़ो।''

''पर मेरे पास तो समय नहीं है। मैं तो संघ-कार्य के विस्तार के लिए देश भर में घूमता रहता हूँ। नागपुर भी थोड़े दिन ही रहता हूँ।''

''कोई बात नहीं, उन्हीं दिनों में मैं तुम्हें पढ़ा दिया करूँगा।'' उनके यह कहने पर मैंने स्वीकार कर लिया।

उन्होंने मुझे बताया कि सारी सृष्टि ब्रह्म द्वारा ही निर्मित है। इसमें पशु-पक्षी, कीट-पतंगे, पेड़-पौधे, जड़-चेतन सब ब्रह्म ही है। मानव चाहे किसी भी जाति, प्रांत या रंग का हो, ब्रह्म का ही रूप है। अतः हमें किसी से भेदभाव नहीं करना चाहिए।

कुछ दिन बाद हम दोनों को एक कार्यक्रम में भाग लेने का अवसर मिला। आयोजकों ने हमें तीन सीट वाले एक अच्छे सोफे पर बैठाया। एक ओर मैं बैठा, तो दूसरी ओर मेरे वे विद्वान मित्र। कार्यक्रम चल रहा था कि वे मेरी ओर खिसकने लगे। मैंने उनसे कारण पूछा, तो उन्होंने हाथ से अपनी बगल में इशारा किया।

मैंने देखा कि हमारे सोफे पर जो जगह खाली थी, वहाँ उनकी बगल में एक तगड़े सज्जन आकर बैठ गये। वे किसी और देश के निवासी थे और उनका रंग काफी काला था। काले रंग और तगड़े शरीर के कारण वे कुछ भयानक से दिख रहे थे। उन्हीं को देखकर वे मेरी ओर खिसक रहे थे।

मैंने कहा, ''खिसक क्यों रहे हैं, क्या आप इन्हें पहचानते नहीं हैं ?''

''नहीं; पर क्या आप पहचानते हैं ?'' उन्होंने पूछा।

''हाँ, अच्छी तरह।'' मैंने कहा।

''कौन हैं ये ?'' उन्होंने आश्चर्य से मेरी ओर देखकर पूछा।

''ये वही ब्रह्म हैं, जिनके बारे में आपने कई दिन तक मुझे समझाया है।'' उनका चेहरा अब देखने लायक हो गया था।

यह कथा सुनाकर श्री गुरुजी बताते थे कि अपने समाज के प्रति हमारे मन में सच्चा प्रेम होना आवश्यक है। थोथा ज्ञान न भी हो तो चलेगा; पर प्रेम के बिना एकता और एकात्मता होना असंभव है।

.....

अहिंसा की व्याख्या

कई बार लोग अहिंसा की व्याख्या अपने-अपने मतलब के अनुसार करते हैं। पर अहिंसा का अर्थ कायर की तरह चुप बैठना नहीं है।

एक राज्य पर किसी दूर देश के विधर्मी शासक ने एक बार आक्रमण कर दिया। राजा ने अपने सेनापति को आदेश दिया कि सेना लेकर सीमा पर जाये और आक्रमणकारी का मुँहतोड़ उत्तर दे।

सेनापति अहिंसावादी था। वह लड़ना नहीं चाहता था। पर राजा का आदेश लड़ने का था। अतः वह अपनी समस्या लेकर परामर्श करने के लिए भगवान बुद्ध के पास गया।

सेनापति ने कहा, ''युद्ध होने पर शत्रु सेना के सैकड़ों सैनिक मारे जायेंगे, क्या यह हिंसा नहीं है ?''

''हाँ, हिंसा तो है।'' भगवान बोले। ''पर यह बताओ, यदि हमारी सेना ने उनका मुकाबला न किया, तो क्या वे वापस अपने देश चले जायेंगे ?''

''नहीं, वापस तो नहीं जायेंगे।'' सेनापति ने कहा।

''अर्थात वे हमारे देश में निरपराध नागरिकों की हत्या करेंगे। फसल और सम्पत्ति को नष्ट करेंगे ?''

''हाँ, यह तो होगा ही।'' सेनानायक बोला।

''तो क्या यह हिंसा नहीं होगी ? यदि तुम हिंसा के भय से चुप बैठे रहे, तब हमारे देश के नागरिक मारे जायेंगे। और इस हिंसा का पाप तुम्हारे सिर आयेगा।'' सेनापति ने सिर झुका लिया।

''क्या हमारी सेना आक्रमणकारियों को रोकने में सक्षम है ?'' भगवान ने आगे पूछा।

''जी हाँ। यदि उसे आदेश दिया जाये, तो वह हमलावरों को बुरी तरह मार भगायेगी।'' सेनापति का उत्तर था।

''तब अपनी सेना को तुरंत आदेश दो कि वह इन विदेशियों का हर प्रकार से मुकाबला करे और पराजित कर देश से निकाल दे।''

स्पष्ट है कि अंहिसा का अर्थ कायरता नहीं है। अहिंसा का अर्थ है किसी दूसरे पर अत्याचार न करना। लेकिन यदि कोई हम पर आक्रमण और अत्याचार करे, तो उसका मुँहतोड़ उत्तर देना।

.....

मानसिक स्थिरता

लोकमान्य तिलक की भगवद्गीता के प्रति बहुत श्रद्धा थी। जब वे मांडले जेल में रहे, तब उन्होंने 'गीता रहस्य' नामक पुस्तक भी लिखी थी; पर यह उससे पहले की घटना है।

वे अपने अन्य कार्य करते हुए 'केसरी' नामक समाचार पत्र का सम्पादन भी करते थे। एक बार उनका पुत्र बहुत बीमार था, उसकी देखभाल करते हुए भी वे अखबार का काम करते रहे। एक दिन जब वे कार्यालय में बैठे काम कर रहे थे, तो घर से सूचना आयी कि बेटे की तबियत बहुत खराब हो गयी है, जल्दी आइये।

उन्होंने उत्तर भिजवाया कि मैं काम पूरा करके आता हूँ। तब तक चिकित्सक को बुलवा लें, क्योंकि दवा तो वह ही देगा। इसके बाद वे सम्पादकीय लिखने लगे और उसे पूरा करके ही घर गये। घर जाकर पता लगा कि बेटे ने प्राण छोड़ दिये हैं। उन्होंने इसे ईश्वर की इच्छा मानकर शान्त मन से उसका अंतिम संस्कार कर दिया।

यह थी ध्येय के प्रति उनकी दृढ़ता और मानसिक स्थिरता। गीता में ऐसे व्यक्ति को ही भगवान कृष्ण ने 'स्थितप्रज्ञ' कहा है।

.....

छोटी सी भूल

अनेक बार हम कुछ घटनाओं को छोटी से भूल कहकर छोड़ देते हैं; पर आगे चलकर उसका दुष्परिणाम बहुत भयानक होता है। इसे समझाने के लिए श्री गुरुजी यह बहुचर्चित कथा सुनाते थे।

एक विधवा स्त्री और उसका इकलौता पुत्र गाँव में रहते थे। वह महिला बहुत कठिनाई से मेहनत-मजदूरी कर अपना और अपने पुत्र का पालन कर रही थी। माँ की इच्छा थी कि उसका बेटा पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बने। इसलिए उसने उसे गाँव के ही एक विद्यालय में भर्ती भी करा दिया।

एक बार वह बालक अपने साथी की पेंसिल चुरा लाया। घर आकर उसने वह माँ को दे दी। माँ ने चुपचाप उसे रख लिया। धीरे-धीरे वह और भी सामान लाने लगा। माँ ने सोचा कि यह छोटा है, डाँटने से नाराज न हो जाये, इसलिए वह चुप ही रहती। अब वह इधर-उधर से पैसे भी लाने लगा। इसी प्रकार होते-होते वह एक बड़ा अपराधी बन गया। एक बार डकैती और हत्या के अभियोग में वह पकड़ा गया और उसे फाँसी की सजा घोषित हो गयी।

फाँसी से पूर्व जब उसकी अंतिम इच्छा पूछी गयी, तो उसने अपनी माँ से मिलना चाहा। जब माँ सामने आयी, तो उसने कान में कुछ बात कहने के बहाने माँ का कान काट लिया। माँ दर्द से चीख पड़ी। वहाँ खड़े लोग उसकी आलोचना करने लगे।

कारण पूछने पर उसने कहा कि मेरी इस दुर्दशा की दोषी मेरी माँ ही है। जिस दिन मैंने पहली बार चोरी की थी, यदि उसी दिन माँ ने कान खींचकर मुझे रोक दिया होता, तो मैं आज यहाँ नहीं होता। इसीलिए मैंने माँ का कान काटा है।

स्पष्ट है कि भूल चाहे छोटी ही हो; पर तुरंत टोक देने से वह बड़ी होने से बच जाती है।

.....

यह कैसा धर्म?

महाभारत के युद्ध में जब अर्जुन और कर्ण का युद्ध हो रहा था, तो एक समय ऐसा आया जब कर्ण के रथ का पहिया कीचड़ में धँस गया। वह शस्त्र रथ में ही रखकर नीचे उतरा और उसे निकालने लगा। यह देखकर भगवान कृष्ण ने अर्जुन को संकेत किया और उसने कर्ण पर बाणों की बौछार कर दी। इससे कर्ण बौखला गया। वह अर्जुन की निन्दा करने लगा – इस समय मैं निःशस्त्र हूँ। ऐसे में मेरे ऊपर बाण चलाना अधर्म है।

पर श्रीकृष्ण ने उसे मुँहतोड़ उत्तर देते हुए कहा – महाबली कर्ण, आज तुम्हें धर्म याद आ रहा है; पर उस दिन तुम्हारा धर्म कहाँ गया था, जब द्रौपदी की साड़ी को भरी सभा में खींचा जा रहा था। जब अनेक महारथियों ने निहत्थे अभिमन्यु को घेरकर मारा था, तब तुम्हें धर्म की याद क्यों नहीं आयी ?

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपनी बाणवर्षा और तेज करने को कहा। परिणाम यह हुआ कि कर्ण ने थोड़ी देर में ही प्राण छोड़ दिये। यह इतिहास कथा यह बताती है कि धर्म का व्यवहार केवल धर्म पर चलने वालों के लिए ही होना चाहिए। दुष्टों को उन जैसी दुष्टता से दंड देना बिल्कुल गलत नहीं है।

.....

सबसे बड़ा मानव-धर्म

जब तक हमारे मन में मानवमात्र के लिए प्रेम नहीं होगा, तब तक सामाजिक कार्य संभव नहीं है। यह समझाने के लिए श्री गुरुजी एक बहुप्रचलित कथा सुनाते थे।

एक नदी में एक साधु बाबा नहा रहे थे। अचानक उन्होंने देखा कि एक बिच्छू नदी के तेज बहाव के साथ बह रहा है। साधु ने सोचा कि यदि इसे बाहर न निकाला गया, तो यह नदी में डूबकर मर जाएगा। अतः उन्होंने अपना हाथ पानी में डालकर बिच्छू को उठा लिया।

पर बिच्छू जैसे ही पानी से निकला, उसने साधु के हाथ पर डंक मार दिया। डंक लगते ही बाबा का हाथ काँपा और बिच्छू फिर नदी में जा गिरा। यह देखकर बाबा ने उसे फिर उठाया; पर बिच्छू ने फिर डंक मार दिया।

जब यह क्रिया तीन-चार बार हो गयी, तो निकट ही स्नान कर रहा एक अन्य व्यक्ति बोला – बाबा जी, आप देखने में तो बहुत ज्ञानी लगते हैं; पर यह नहीं जानते कि बिच्छू का स्वभाव ही डंक मारना है। फिर भी आप उसे बार-बार पानी से बाहर निकाल रहे हैं।

साधु बाबा ने कहा – मैं बिच्छू का स्वभाव अच्छी तरह जानता हूँ। वह पानी में डूब रहा है, फिर भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ रहा। इसी तरह डूबते को बचाना मेरा स्वभाव है। यदि वह बिच्छू होकर अपना स्वभाव नहीं छोड़ रहा, तो मैं साधु होकर अपना स्वभाव क्यों छोड़ूँ ?

यह कथा सुनाकर श्री गुरुजी बताते थे कि समाज का कार्य करते समय लोग अपने स्वभाव के अनुसार तरह-तरह की बातें कहेंगे। कई लोग प्रताड़ित भी करेंगे। पर हमें अपना सेवा का स्वभाव एवं प्रेमभाव नहीं छोड़ना है। तभी हमें सफलता मिलेगी।

.....

शस्त्र बड़ा या हिम्मत?

प्रायः लोग गुरुजी से कहते थे कि आप शाखा में जो लाठी सिखाते हैं, उससे क्या होगा ? आज तो बंदूक-पिस्तौल का युग है। ऐसे लोगों को श्री गुरुजी एक सत्य घटना सुनाते थे।

देश विभाजन के समय की बात है। पंजाब का जो भाग पाकिस्तान को मिल गया था, वहाँ से हिन्दू अपनी जान-माल बचाकर बड़ी कठिनाई से भारत की ओर आ रहे थे। अनेक हिन्दू परिवारों के पास शस्त्र भी थे। ऐसे ही एक परिवार की यह घटना है।

मुस्लिम गुंडों ने जब गाँव को घेर लिया, तो उस परिवार के लोग अपने घर की छत पर चढ़ गये। घर के मुखिया के पास दोनाली बंदूक थी। वह उसे लेकर बैठ गया। नीचे गुंडे दरवाजा तोड़ने की तैयारी कर रहे थे; पर उसकी बंदूक से वे डरे भी हुए थे।

अचानक एक गुंडे ने बड़ा छुरा निकाला और उसे लहराते हुए बोला, ''सेठ, या तो अपनी बंदूक नीचे फेंक दे, वरना अभी यह छुरा फेंककर तेरा काम तमाम करता हूँ।'' सेठ यह सुनते ही भयभीत हो गया और उसने बंदूक नीचे फेंक दी। तब तक मुस्लिम गुंडों ने दरवाजा तोड़ दिया। वे सब ऊपर चढ़ गये और उसी बंदूक से सेठ के पूरे परिवार को मार डाला।

श्री गुरुजी यह कथा सुनाकर बताते थे कि शस्त्र से अधिक महत्त्व शस्त्र चलाने वाले हाथ और दिल की हिम्मत का है। शाखा में दंड के अभ्यास से इन दोनों को ही मजबूत करने का प्रयास होता है।

.....

स्वयं से प्रारम्भ करें

अपने क्षेत्र में संघ या कोई सामाजिक कार्य प्रारम्भ करने के लिए प्रायः हम दूसरों का मुँह ताकते रहते हैं। पर जब तक हम स्वयं संकल्प लेकर कार्य प्रारम्भ नहीं करते, तब तक सफलता संभव नहीं है। इसे समझाने के लिए श्री गुरुजी एक कथा सुनाते थे।

एक किसान के खेत में एक चिड़िया ने अपना घोंसला बनाकर उसमें अंडे दिये। कुछ समय बाद उनमें से बच्चे निकल आये। एक दिन जब चिड़िया दाना-पानी लेकर वापस आयी, तो बच्चे बहुत डरे हुए थे। माँ को देखकर वे बोले - माँ, अब हमें शीघ्र ही यहाँ से चल देना चाहिए। आज इस खेत का मालिक किसान आया था। वह कह रहा था कि मेरी फसल पक गयी है। कल मैं गाँव वालों को लाकर फसल कटवाना प्रारम्भ करूँगा।

माँ ने बच्चों को सांत्वना देते हुए कहा - घबराओ नहीं, अभी फसल नहीं कटेगी।

दो दिन बाद शाम को बच्चे फिर सहमे हुए थे। माँ के आते ही बोले - आज तो वह किसान बहुत नाराज हो रहा था। कह रहा था कि गाँव वाले मेरी बात नहीं मानते। कल मैं अपने पड़ोसियों को लाकर फसल कटवाऊँगा।

चिड़िया ने फिर बच्चों को कहा - धैर्य रखो, अभी फसल नहीं कटेगी।

तीन-चार दिन बाद फिर चिड़िया जब बच्चों के लिए दाना लेकर लौटी, तो बच्चे डर के मारे काँप रहे थे। आते ही बोले - माँ, अब तो हमें चल ही देना चाहिए। आज तो वह किसान पड़ोसियों को भी गाली दे रहा था। कह रहा था कि मेरे पड़ोसी बहुत खराब हैं। समय पर काम नहीं आते। ऐसे तो मेरी फसल बर्बाद हो जाएगी। कल मैं अपने भाइयों से फसल कटवाने को कहूँगा।

चिड़िया ने थोड़ी चिन्ता तो दिखायी; पर कहा - शांत रहो, अभी फसल नहीं कटेगी।

ऐसे ही दो दिन और बीत गये। एक शाम बच्चों ने फिर माँ को बताया – आज तो किसान की आँखें गुस्से में लाल हो रही थीं। वह अपने भाइयों को भी भली-बुरी सुना रहा था। वह कह रहा था कि कल चाहे कोई आये या नहीं; पर मैं स्वयं आकर फसल काटूँगा।

यह सुनकर चिड़िया गंभीर हो गयी। उसने बच्चों से कहा – चलो अब यहाँ से चलने की तैयारी करो। चूँकि अब किसान ने स्वयं फसल काटने का निश्चय कर लिया है। इसलिए कल फसल निश्चित ही कट जाएगी।

स्पष्ट है कि जब तक हम किसी काम को स्वयं हाथ नहीं लगाएंगे, तब तक अन्य कोई भी सहयोग करने नहीं आयेगा।

.....

आत्मविश्वास आवश्यक

किसी भी कार्य को करते समय यदि मन में प्रबल इच्छाशक्ति और आत्मविश्वास हुआ, तो कठिन से कठिन कार्य भी सरल हो जाता है। जीवन में सदा काम आने वाले इस सूत्र को समझाने के लिए श्री गुरुजी जैन साहित्य में उल्लिखित एक कथा सुनाते थे।

एक बार श्रीकृष्ण, बलराम और सात्यकि जंगल में घूमते-घूमते भटक गये। रात हो गयी; पर घर वापस जाने का रास्ता नहीं मिला। हारकर उन्होंने वन में ही एक बड़े पेड़ के नीचे रात बिताने का निर्णय किया। जंगल काफी भयावह था, अतः यह भी निर्णय हुआ कि तीनों में प्रत्येक क्रमशः दो घंटे जागकर पहरा देगा।

सबसे पहले सात्यकि की बारी थी। वह जागकर पहरा देने लगा, जबकि श्रीकृष्ण और बलराम सो गये। कुछ समय बीतने पर पेड़ से एक ब्रह्मराक्षस कूद कर सामने आ गया। उसने सात्यकि को डराकर कहा कि वह कई दिन से भूखा है। आज सौभाग्य से तुम तीन हट्टे-कट्टे लोग यहाँ आ गये हो, अब वह तीनों को खायेगा।

सात्यकि को क्रोध आ गया। उसने कहा कि हमें खाने से पहले तुम्हें मुझसे युद्ध करना होगा। राक्षस तैयार हो गया। दोनों में युद्ध होने लगा। सात्यकि ने देखा कि जैसे-जैसे समय बीत रहा है, उसकी शक्ति कम हो रही है। दूसरी ओर वह राक्षस शक्ति और आकार में बड़ा होता जा रहा है।

लड़ते-लड़ते दो घंटे बीत गये। अब जागने की बारी बलराम की थी। सात्यकि ने बलराम को जगाया और स्वयं सो गया। थोड़ी देर ही बीती थी कि वह राक्षस बलराम के सामने भी आ गया और फिर तीनों को खाने की बात कहने लगा। बलराम भला कहाँ कमजोर पड़ने वाले थे, उन्होंने भी राक्षस से युद्ध प्रारम्भ कर दिया।

बलराम को लड़ते-लड़ते दो घंटे बीतने लगे। वे थक गये; पर राक्षस की शक्ति कम होने के स्थान पर बढ़ती ही जा रही थी। हारकर उन्होंने श्रीकृष्ण को जगाया और स्वयं सो गये। अब राक्षस श्रीकृष्ण के सामने आकर भूख मिटाने की बात करने लगा। परिणामस्वरूप श्रीकृष्ण से उसकी कुश्ती चालू हो गयी।

पर श्रीकृष्ण ने लड़ने की एक नयी विधि निकाली। उन्होंने इस युद्ध को एक खेल बना लिया। वे लड़ते जाते, राक्षस को मारते जाते और स्वयं हँसते भी जाते। राक्षस इस हँसी से परेशान हो गया। वह श्रीकृष्ण पर आघात करता; पर वे वार बचाकर जोर से हँस पड़ते। मौका देखकर श्रीकृष्ण उसे घूँसा मारते और फिर हँसते।

राक्षस इस प्रकार के युद्ध का अभ्यस्त नहीं था। अब वह थकने लगा। इतना ही नहीं, तो उसका आकार भी कम होने लगा। एक समय तो वह मच्छर जितना छोटा हो गया। यह देखकर श्रीकृष्ण ने उसे अपने अँगोछे में बाँध लिया।

तब तक सुबह हो गयी। सात्यकि और बलराम उठ गये। दोनों ने रात में राक्षस से जो मार खायी थी, उसके कारण वे दर्द से कराह रहे थे। श्रीकृष्ण को हँसते देख उन्होंने राक्षस की चर्चा की। श्रीकृष्ण ने अपने अँगोछे में बँधे राक्षस को सामने कर दिया।

यह कथा सुनाकर श्री गुरुजी कहते थे कि किसी भी काम को करते समय संकट तो आते ही हैं। यदि बलराम और सात्यकि की तरह आत्मविश्वास न रहे, तो वे संकट हम पर हावी हो जाते हैं। लेकिन यदि श्रीकृष्ण की तरह हम हँसते हुए उनका सामना करें, तो संकट मच्छर की तरह छोटे होकर हमारे काबू में हो जाते हैं।

.....

चरित्र का महत्त्व

किसी भी व्यक्ति में शरीर का बल तो आवश्यक है; पर उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण उसमें चरित्रबल अर्थात शील है। यदि यह न हो, तो अन्य सभी शक्तियाँ भी बेकार हो जाती हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य में प्रह्लाद की कथा आती है, जो इसका महत्त्व बताती है।

राक्षसराज प्रह्लाद ने अपनी तपस्या एवं अच्छे कार्यों के बल पर देवताओं के राजा इन्द्र को गद्दी से हटा दिया और स्वयं राजा बन गया। इन्द्र परेशान होकर देवताओं के गुरु आचार्य वृहस्पति के पास गये और उन्हें अपनी समस्या बतायी।

वृहस्पति ने कहा कि प्रह्लाद को ताकत के बल पर तो हराया नहीं जा सकता। इसके लिए कोई और उपाय करना पड़ेगा। वह यह है कि प्रह्लाद प्रतिदिन प्रातःकाल दान देते हैं। उस समय वह किसी याचक को खाली हाथ नहीं लौटाते। उनके इस गुण का उपयोग कर ही उन्हें पराजित किया जा सकता है।

इन्द्र द्वारा जिज्ञासा करने पर आचार्य वृहस्पति ने आगे बताया कि प्रातःकाल दान-पुण्य के इस समय में तुम एक भिक्षुक का रूप लेकर जाओ। जब तुम्हारा माँगने का क्रम आये, तो तुम उनसे उनका चरित्र माँग लेना। बस तुम्हारा काम हो जाएगा।

इन्द्र ने ऐसा ही किया। जब उन्होंने प्रह्लाद से उनका शील माँगा, तो प्रह्लाद चौंक गये। उन्होंने पूछा – क्या मेरे शील से तुम्हारा काम बन जाएगा ? इन्द्र ने हाँ में सिर हिला दिया। प्रह्लाद ने अपने शील अर्थात् चरित्र को अपने शरीर से जाने को कह दिया।

ऐसा कहते ही एक तेजस्वी आकृति प्रह्लाद के शरीर से निकली और भिक्षुक के शरीर में समा गयी। पूछने पर उसने कहा – मैं आपका चरित्र हूँ। आपके कहने पर ही आपको छोड़कर जा रहा हूँ।

कुछ समय बाद प्रह्लाद के शरीर से पहले से भी अधिक तेजस्वी एक आकृति और निकली। प्रह्लाद के पूछने पर उसने बताया कि मैं आपका शौर्य हूँ। मैं सदा से शील वाले व्यक्ति के साथ ही रहता हूँ, चूँकि आपने शील को छोड़ दिया है, इसलिए अब मेरा भी यहाँ रहना संभव नहीं है।

प्रह्लाद कुछ सोच ही रहे थे कि इतने में एक आकृति और उनके शरीर को छोड़कर जाने लगी। पूछने पर उसने स्वयं को वैभव बताया और कहा कि शील के बिना मेरा रहना संभव नहीं है। इसलिए मैं भी जा रहा हूँ।

इसी प्रकार एक-एक कर प्रह्लाद के शरीर से अनेक ज्योतिपुंज निकलकर भिक्षुक के शरीर में समा गये। प्रह्लाद निढाल होकर धरती पर गिर गये। सबसे अंत में एक बहुत ही प्रकाशमान पुंज निकला। प्रह्लाद ने चौंककर उसकी ओर देखा, तो वह बोला – मैं आपकी राज्यश्री हूँ। चूँकि अब आपके पास न शील है न शौर्य; न वैभव है न तप; न प्रतिष्ठा है न सम्पदा। इसलिए अब मेरे यहां रहने का भी कोई लाभ नहीं है। अतः मैं भी आपको छोड़ रही हूँ।

इस प्रकार इन्द्र ने केवल शील लेकर ही प्रह्लाद का सब कुछ ले लिया। निःसंदेह चरित्रबल मनुष्य की सबसे बड़ी पूँजी है। चरित्र हो तो हम सब प्राप्त कर सकते हैं, जबकि चरित्र न होने पर हम प्राप्त वस्तुओं से भी हाथ धो बैठते हैं।

शक्ति का रहस्य

सीधे-सादे लोगों की अज्ञानता का लाभ उठाकर कुछ धूर्त लोग प्रायः अपना उल्लू सीधा कर लेते हैं।

एक मौलवी साहब किसी मजार पर बैठते थे। उन्होंने लोगों से पैसे ऐंठने का एक तरीका खोज निकाला था। मजार के सामने एक बड़ा पत्थर पड़ा था। भारी होने के कारण लोग उसे हिला नहीं पाते थे। जब आठ-दस लोग एकत्र हो जाते, तो मौलवी साहब उन्हें कहते कि वे मिलकर उस पत्थर को हिलाएँ। लोग प्रयास करते; पर वह पत्थर हिलता ही नहीं था।

इस पर वह मौलवी सबसे कहता कि अब वे सब मजार की ओर मुँह करके पत्थर को हिलाने का प्रयास करें। मौलवी साहब जोर से 'पीर साहब की फतह' का नारा लगाकर सबको इशारा करते। अब सबके जोर लगाने पर वह पत्थर हिल जाता। सब लोग समझते कि यह पीर साहब का ही चमत्कार है।

एक बार कुछ स्वयंसेवक उस स्थान से आये थे, उन्होंने श्री गुरुजी को उस पत्थर और पीर के चमत्कार के बारे में बताया। गुरुजी उन सबको लेकर बाहर आये। वहाँ मजार के सामने वाले पत्थर से भी बड़ा एक पत्थर रखा था। गुरुजी ने सबको एक दिशा में खड़ा किया। फिर सबने उच्च स्वर में 'बजरंग बली की जय' का नारा लगाकर जोर लगाया, तो वह पत्थर भी हिल गया।

अब श्री गुरुजी ने सबको समझाया कि पत्थर हिलने से पीर साहब का कोई संबंध नहीं है। जब सब मिलकर एक दिशा में ताकत लगाते हैं, तो पत्थर हिलेगा ही। अर्थात शक्ति पीर साहब में नहीं सामूहिक प्रयास में है। इसी प्रकार हम किसी कठिन कार्य को मिलकर करें, तो वह भी सरल हो जायेगा।

.....

बुद्धि का चमत्कार

यदि व्यक्ति में त्वरित बुद्धि हो, तो वह आने वाले संकट को टाल सकता है। प्रसिद्ध क्रांतिकारी चन्द्रशेखर आजाद का अंग्रेजी गुप्तचर पीछा कर रहे थे। वे उनसे बचने के लिए अपने एक मित्र के घर पर छिप गये। पर पुलिस को कहीं से उनके बारे में कुछ जानकारी मिल गयी और वह उनके घर पर आ धमकी।

पुलिस ने उससे काफी पूछताछ की; पर वह मानने को तैयार ही नहीं था कि आजाद उनके घर पर छिपे हैं। पुलिस तलाशी लेने की बात करने लगी। आजाद घर में ही थे। यह देखकर मित्र की पत्नी ने अपनी बुद्धि का प्रयोगकर आजाद को संकट से बचा लिया।

उस दिन मकर संक्रांति थी। मित्र की पत्नी ने जोर से आजाद को डाँटते हुए कहा - मूर्ख, बच्चों के साथ ही खेलता रहेगा क्या ? यह मिठाई का टोकरा उठा और मेरे साथ चल। आज त्योहार का दिन है। पूरे मोहल्ले में मिठाई बाँटनी है।

आजाद ने सिर पर टोकरी उठायी और मित्र की पत्नी के साथ बाहर निकल गये। पुलिस वाले बहस में ही उलझे रहे। बाहर निकलने के बाद कैसा त्योहार और कैसी मिठाई ? आजाद गये, तो फिर वापस ही नहीं आये।

इस प्रकार उस वीर महिला ने अपनी प्रत्युत्पन्नमति से आजाद एवं अपने परिवार को एक भारी संकट से बचा लिया।

.....

सच्ची देशभक्ति

किसी भी लोकतान्त्रिक देश में राजनीतिक दलों में परस्पर मतभेद होना स्वाभाविक ही है। पर यह मतभेद अपने देश तक ही सीमित रहें, तो अच्छा है।

बात उस समय की है जब श्री नेहरू भारत के प्रधानमंत्री थे। एक बार वे विदेश गये, तो वहाँ कुछ भारतीयों ने उन्हें काले झंडे दिखाये और मुर्दाबाद के नारे लगाये। श्री गुरुजी को इस समाचार से बहुत कष्ट

हुआ। यद्यपि वे नेहरू जी की नीतियों के घोर विरोधी थे; पर प्रधानमंत्री का देश से बाहर अपमान हो, यह उन्हें स्वीकार नहीं था। उन्होंने इसी संदर्भ में चर्चिल का एक उदाहरण सुनाया।

ब्रिटेन में उन दिनों चर्चिल प्रधानमंत्री नहीं थे। उनके दल की चुनाव में पराजय हो गयी, अतः वे विपक्ष के नेता बनाये गये। इसी नाते वह एक बार अमरीका गये। वहाँ पत्रकारों ने उनसे सरकार के बारे में प्रश्न किये। उनका विचार था कि चर्चिल सरकार के विरुद्ध बोलेंगे; पर चर्चिल ने स्पष्ट कहा : अपने देश में भले ही मैं विरोधी दल का नेता हूँ; पर देश से बाहर मैं सरकार का समर्थक हूँ। इसलिए मैं अपनी सरकार के विरुद्ध कुछ नहीं बोलूँगा।

यह उदाहरण बताता है कि देशभक्ति का सही अर्थ क्या है ?

.....

राष्ट्रीय कौन ?

भारत में राष्ट्रीय कौन है, कौन देशी है और कौन विदेशी; यह प्रश्न प्रायः अनेक बार उठ खड़ा होता है। इसके लिए श्री गुरुजी सियार और सिंह के बच्चों की यह रोचक कथा सुनाते थे।

एक बार एक सियार का बच्चा जंगल में घूमते समय अपनी माँ से बिछुड़ गया। शाम हुई तो भूख और डर के मारे वह रोने लगा। उसी समय वहाँ से एक शेरनी जा रही थी। रोते बच्चे को देख वह उसे अपनी गुफा में ले आयी। उसे दूध पिलाया और अपने बच्चों के साथ-साथ उसका लालन-पालन भी करने लगी।

धीरे-धीरे वह सियार का बच्चा शेर के बच्चों से घुलमिल गया। वह भी उनके साथ दिन भर जंगल में घूमता, खेलता और रात में शेरनी का दूध पीकर सो जाता।

वह सियार का बच्चा शेर के बच्चों से आयु में बड़ा था। एक दिन जंगल में घूमते हुए उन्हें एक हाथी दिखायी दिया। शेर के बच्चे बहुत खुश हुए। वे बोले आज बहुत दिनों बाद मोटा-ताजा शिकार मिला है, आओ इसे मार डालें।

यह देखकर सियार का बच्चा बोला - अरे, क्या करते हो ? देखते नहीं, यह हमसे शरीर में कितना बड़ा और बलवान है। यदि हमने इस पर हमला किया, तो यह हमें ही मार डालेगा।

शेर के बच्चे नहीं माने, वे हाथी पर हमला करने की तैयारी करने लगे। यह देखकर सियार का बच्चा दौड़ता हुआ घर आया। उसने शेरनी को कहा - माँ, देखो मेरे छोटे भाई मेरी बात नहीं मानते। वे अपने से बहुत बड़े हाथी से लड़ रहे हैं। वह उन्हें मार डालेगा।

शेरनी ने हँसकर कहा - यह ठीक है कि तुम मेरा दूध पीकर बड़े हुए हो; पर तुम हो तो सियार ही। तुम्हारे वंश में कोई हाथी से नहीं लड़ता; पर हमारे यहाँ तो यह सामान्य सी बात है। इसलिए अच्छा यही है कि अब तुम अपने घर चले जाओ। ऐसा न हो कि मेरे बच्चे हाथी को मारने के बाद तुम पर ही हमला न बोल दें।

इस कथा का अभिप्राय यह है कि यदि कोई व्यक्ति बाहर से आकर हमारे देश में रहने लगे, तो केवल इतने मात्र से ही वह भारत का राष्ट्रीय नहीं हो जाता। राष्ट्रीयता तो एक परम्परा है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी मिलने वाले संस्कारों से दृढ़ होती है।

.....

हिन्दू विचार और वेशभूषा

मनुष्य जिन विचारों और संस्कारों के बीच पलकर बड़ा होता है, वैसा ही उसका व्यवहार, खानपान और वेशभूषा भी हो जाती है।

एक संन्यासी विदेश प्रवास पर गये। वहाँ एक व्यक्ति ने उनसे कहा कि आप हिन्दू लोग कैसी ढीली ढाली धोती पहनते हो ? यदि कहीं मारपीट हो गयी, तो न लड़ सकोगे और न भाग सकोगे।

संन्यासी ने हँसकर कहा – हम भारतीय सोचते हैं कि दुनिया में सब लोग हमारे जैसे ही सज्जन और सभ्य हैं। इसलिए लड़ाई और मारपीट का विचार हमारे मन में नहीं आता। दूसरी ओर तुम हर समय इसके बारे में ही सोचते रहते हो। इसलिए वैसी ही तुम्हारी वेशभूषा है और हिंसक पशुओं जैसा खानपान।

.....

प्रकृति, विकृति और संस्कृति

एक प्रसिद्ध कहावत है कि अपनी रोटी खाना प्रकृति, दूसरे की रोटी खा लेना विकृति, तथा अपनी रोटी दूसरे को खिला देना संस्कृति है। इस संबंध में एक पुराना प्रसंग श्री गुरुजी सुनाते थे।

युधिष्ठिर ने एक बार राजसूय यज्ञ किया। यज्ञ के बाद दूर-दूर से आये विद्वानों को भरपूर दान देकर सम्मान सहित विदा किया गया। सब लोग यज्ञ की सफलता से बहुत प्रसन्न थे। एक दिन सभी परिवारजन बैठे थे कि एक नेवला वहाँ आया। उसे देखकर सब आश्चर्यचकित रह गये। उसके शरीर का आधा हिस्सा सुनहरा था, जबकि शेष हिस्सा सामान्य नेवले जैसा था। वह नेवला अचानक मनुष्यों जैसी भाषा में बोलने लगा।

नेवला बोला – महाराज युधिष्ठिर, यह ठीक है कि आपने यज्ञ में बहुत दान दिया है। यज्ञ भी समुचित विधि-विधान से हुआ है। आपको बहुत पुण्य और यश भी मिला है। फिर भी आपके यज्ञ में वह बात नहीं है, जो उस निर्धन अध्यापक के यज्ञ में थी।

सब लोग हैरान हो गये। युधिष्ठिर बोले – तुम किस यज्ञ की बात कर रहे हो। कृपया हमें उसके बारे में कुछ बात बताओ। तुम्हारे शरीर का आधा भाग सुनहरा और शेष सामान्य नेवले जैसा क्यों है ?

नेवला बोला – महाराज, मैं जहाँ से आ रहा हूँ, वहाँ भयानक अकाल पड़ा है। वहाँ एक निर्धन अध्यापक अपनी पत्नी, पुत्र और पुत्रवधू के साथ रहता था। वे घर आये अतिथि का भगवान समझकर सत्कार करते थे। वर्षों से वे इस परम्परा को निभा रहे थे।

लेकिन अकाल के कारण उन्हें प्रायः कई दिन तक भूखा रहना पड़ता था। एक दिन वह अध्यापक कहीं से थोड़ा आटा लाया। उसकी पुत्रवधू ने उससे पाँच रोटी बनायीं। एक रोटी भगवान को अर्पण कर उन्होंने एक-एक रोटी आपस में बाँट ली। वे खाना प्रारम्भ कर ही रहे थे कि अचानक द्वार पर एक भिक्षुक दिखायी दिया। उसके शरीर को देखकर ही लग रहा था कि कई दिनों से उसके पेट में अन्न का एक दाना भी नहीं गया है।

अध्यापक ने उसका सत्कार किया और अपनी रोटी उसे दे दी। पर उसकी भूख शांत नहीं हुई। अब अध्यापक की पत्नी ने अपने हिस्से की रोटी भी उसकी थाली में डाल दी। इसी प्रकार क्रमशः पुत्र और फिर पुत्रवधू ने भी अपनी रोटी उन अतिथि महोदय को दे दी। चारों रोटी खाकर वह तृप्त हो गया और आशीर्वाद देकर चला गया।

नेवला बोला – महाराज, उस भिक्षुक के जाने के बाद मैं वहाँ आया, तो उस धरती पर गिरे कुछ अन्नकण मेरे शरीर से छू गये। बस उसी समय मेरा आधा शरीर सुनहरा हो गया। तब से मैं देश-विदेश में भटक रहा हूँ। जहाँ भी कोई बड़ा धार्मिक कार्यक्रम होता है, वहाँ जाता हूँ। आपके यज्ञ की भी मैंने बहुत प्रशंसा सुनी थी; पर यहाँ भी मेरा शेष शरीर सुनहरा नहीं हुआ। इसका अर्थ साफ है कि आपके इस यज्ञ का महत्त्व उस निर्धन अध्यापक के यज्ञ से कम है।

यह कहानी हमें प्रकृति, विकृति और संस्कृति का अंतर स्पष्ट करते हुए बताती है कि भारतीय संस्कृति ही अपनी रोटी दूसरे को खिला देने की प्रेरणा देती है।

.....

यह कैसी मुक्ति ?

कई बार लोग आपस के छोटे-छोटे मतभेदों में फँसकर इतने मूर्ख बन जाते हैं कि अपने भाई पर आने वाले संकट की भी अनदेखी कर जाते हैं। इसका दुष्परिणाम आगे चलकर उन्हें स्वयं भी भोगना पड़ता है। इसे समझाने के लिए श्री गुरुजी गुजरात के सोमनाथ मंदिर के विध्वंस का उदाहरण देते थे।

सोमनाथ मंदिर की अतुल धन-सम्पत्ति के बारे में सुनकर महमूद गजनवी ने उस पर चढ़ाई करने की योजना बनायी। उसे पता था कि सोमनाथ पहुँचना आसान नहीं है। रास्ते में अनेक हिन्दू राज्य हैं, जिनकी सोमनाथ मंदिर के प्रति आस्था है। राजस्थान के निर्जन रेगिस्तान भी हैं, जिन्हें पार करना बहुत कठिन है। इस पर भी उसने अपना निश्चय नहीं त्यागा और सेना लेकर चल दिया।

उसे यह पता था कि गुजरात राज्य के प्रति आसपास के राज्यों में कुछ नाराजगी है। उसने सभी राजाओं से कहा कि वह सोमनाथ को जीतकर उन्हें भी गुजरात शासन के साम्राज्यवादी पंजे से मुक्त करायेगा। राजाओं ने उसकी धूर्तता को न समझते हुए उसे सोमनाथ तक पहुँचने का सरल मार्ग बता दिया।

पर सोमनाथ को जीतकर महमूद गजनवी ने क्या किया ? उसने आसपास के राजाओं को भी लूटा। वहाँ के मंदिर और तीर्थों को अपमानित किया और इस प्रकार गुजरात, सौराष्ट्र एवं राजस्थान को लम्बे समय तक एक विदेशी एवं विधर्मी साम्राज्य के पंजे की नीचे दबकर रहना पड़ा।

.....

व्यक्तिगत और राष्ट्रीय चरित्र

हर व्यक्ति का व्यक्तिगत चरित्र तो उज्जवल होना ही चाहिए; पर उसके राष्ट्रीय चरित्र के उज्जवल होने का महत्त्व उससे भी अधिक है। इस संबंध में श्री गुरुजी गुजरात का एक उदाहरण सुनाते थे।

गुजरात के एक राज्य में राजा कर्ण के प्रधानमंत्री बहुत विद्वान एवं कलामर्मज्ञ थे। एक बार राजा ने अपने राज्य के एक वरिष्ठ सरदार की पत्नी का अपहरण कर लिया। प्रधानमंत्री ने राजा को उसकी गलती समझाने का प्रयास किया; पर न मानने पर वह क्रोधित हो गया। उसने राजा को दंड देने की प्रतिज्ञा की।

प्रधानमंत्री ने क्रोध में अपना विवेक खो दिया। उसने दिल्ली के मुगल सुल्तान से सम्पर्क कर उन्हें अपने ही राज्य पर आक्रमण करने को उकसाया। मुगल सुल्तान को और क्या चाहिए था। उसने धावा बोला और राजा कर्ण की पराजय हुई। प्रधानमंत्री की प्रतिज्ञा पूरी हुई।

पर इसके बाद क्या हुआ ? मुगलों ने राज्य में कत्लेआम मचा दिया। मंदिरों को तोड़ा, महिलाओं को अपमानित किया, गायों को काटा, हजारों स्त्री, पुरुष और बच्चों को आग में झोंक दिया, जिनमें उस प्रधानमंत्री के परिवारजन भी शामिल थे।

इसके बाद भी वह सुल्तान वापस नहीं गया। उसने सैकड़ों साल तक उस राज्य को अपने अधीन रखा। इतना ही नहीं, वहाँ पैर जमाने के बाद उसने दक्षिण के अन्य राज्यों पर भी हमला बोला और वहाँ भी इसी प्रकार हिन्दुओं को अपमानित होना पड़ा।

यह घटना बताती है कि राजा का राष्ट्रीय चरित्र तो ठीक था; पर निजी चरित्र नहीं। दूसरी ओर प्रधानमंत्री का निजी चरित्र ठीक था; पर राष्ट्रीय चरित्र के अभाव में उसके राज्य को मुगलों की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी।

.....

परोपकार भावना

अनेक लोग कहते हैं कि आज के भौतिकवादी युग में व्यक्ति केवल पैसे के लिए ही काम करता है; पर श्री गुरुजी कोलकाता की एक घटना सुनाकर बताते थे कि मन के संस्कार और परोपकार की भावना पैसे से अधिक प्रभावी होती है।

बड़े शहरों में आजकल भूमिगत नालियाँ, सीवर लाइन आदि बन गयी हैं। इन्हें साफ करने के लिए गड्ढे बनाकर उसे ढक्कन से ढक देते हैं। पर कई बार इनके ढक्कन खुले रह जाते हैं। कोलकाता में एक मोहल्ले में ऐसी ही एक नाली का ढक्कन खुला रह गया। दो बच्चे वहीं पास खेल रहे थे। खेलते-खेलते वे उसमें गिर पड़े और जोर-जोर से चिल्लाने लगे। पास से ही एक व्यक्ति अपने काम पर जा रहा था। आवाज सुनकर उसने नीचे झाँका।

बच्चों को चिल्लाता देखकर वह साइकिल से उतरा और गड्ढे में उतर गया। उसने प्रयासपूर्वक दोनों बच्चों को अपने कंधे पर उठा लिया और किसी तरह गड्ढे से बाहर निकाल दिया। पर इस बीच वह स्वयं बेहोश हो गया। क्योंकि इन नालियों में मलमूत्र प्रवाहित होते रहने के कारण जहरीली गैस भर जाती हैं। वह व्यक्ति उस गैस के दुष्प्रभाव से बेहोश होकर वहीं गिर गया। जब तक लोगों ने उसे बाहर निकाला, तब तक उसने दम तोड़ दिया।

यह कथा सुनाकर श्री गुरुजी कहते थे कि उस व्यक्ति का दोनों बच्चों से कोई परिचय नहीं था। उनको बचाने से उसे रुपये-पैसे का लाभ भी नहीं मिलने वाला था। फिर भी वह अपनी जान की चिंता किये बिना गड्ढे में उतरा और उनकी जान बचायी।

स्पष्ट है कि हर जगह पैसा ही महत्त्वपूर्ण नहीं होता। कई बार परोपकार की भावना और संस्कार भी व्यक्ति की गतिविधियों को संचालित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

.....

शिक्षित कौन ?

अनेक लोग स्वयं को शिक्षित और प्रगतिशील दिखाने के चक्कर में अपने हिन्दू प्रतीकों और नामों की उपेक्षा करते दिखते हैं। इसे स्पष्ट करने के लिए श्री गुरुजी ने एक बार यह कथा सुनायी।

गाँव में रहने वाले एक निर्धन सज्जन ने अनेक कष्ट उठाकर भी अपने बच्चों को पढ़ाया। सौभाग्य से उनका एकमात्र पुत्र पढ़-लिखकर उच्च अधिकारी बन गया और एक बड़े शहर में उसकी नियुक्ति भी हो गयी। उचित समय पर उन्होंने पुत्र का विवाह किया। विवाह के बाद वह युवक पत्नी सहित शहर में ही रहने लगा।

दो साल इसी प्रकार बीत गये, एक दिन उन्हें समाचार मिला कि उनके बेटे के घर में पुत्र का जन्म हुआ है। वे बहुत प्रसन्न हुए तथा अपने पौत्र को देखने की इच्छा से शहर की ओर चल दिये।

जिस समय वे अपने बेटे की कोठी पर पहुँचे, वह अपने मित्रों के साथ बैठा चाय पी रहा था। जब उसने अपने पिता को आते हुए देखा, तो वह घबरा गया। उसने सोचा कि मेरे ये मित्र क्या सोचेंगे कि ऐसा गँवार और निर्धन व्यक्ति उसका पिता है। उसने एक नौकर को भेजा, जिससे वह पिताजी को पिछले दरवाजे से अंदर ले आये।

जब एक मित्र ने आंगतुक के बारे में पूछा, तो उसने बताया कि ये हमारा पुराना घरेलू नौकर है और गाँव से आ रहा है। उसके पिता ने यह सुन लिया। वे सबके सामने गुस्से में बोले : मैं कौन हूँ, यह इसकी माँ से पूछ लो। इतना कहकर वे अपना सामान उठाकर बिना पौत्र को देखे वापस चले गये।

इस घटना का संदेश है कि अच्छी शिक्षा वही है, जो संस्कारों को जीवित और जाग्रत रखे। ऐसी उच्च शिक्षा का क्या लाभ, जिससे व्यक्ति अपने धर्म, संस्कृति और परिवार से ही कट जाये।

.....

क्षमा से दिल जीतो

संघ कार्य के लिए कई बार ऐसे स्थानों पर जाना होता है, जहाँ लोग संघ को नहीं जानते। कई बार वहाँ के लोग विरोधियों द्वारा किये गये दुष्प्रचार से ही अधिक प्रभावित होते हैं। अतः वे कार्यकर्ताओं को भला-बुरा भी कहते हैं।

श्री गुरुजी का विचार था कि इन विरोधियों के प्रति भी प्रेमभाव रखते हुए ऐसे अपमान को चुपचाप सह लेना चाहिए। वे ईसामसीह का उदाहरण देते थे। जब उनके विरोधियों ने उन्हें वधस्तम्भ (क्रॉस) पर चढ़ाया, तब भी उन्होंने प्रार्थना की – हे प्रभु, इन्हें क्षमा करना, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं ?

.....

एक व्यक्ति पर निर्भरता ठीक नहीं

प्रायः अनेक संस्थाएं, संगठन तथा कभी-कभी तो देश भी एक व्यक्ति के नेतृत्व पर इतने निर्भर हो जाते हैं कि उसके अभाव में लोग अपनी हिम्मत ही छोड़ बैठते हैं।

सन १७६१ में पानीपत के मैदान में विशाल युद्ध हुआ। अहमदशाह अब्दाली विदेशी हमलावर था, दूसरी ओर हिन्दू सेना का नेतृत्व सदाशिवराव पेशवा हाथी पर बैठकर कर रहे थे। जब युद्ध पूरे यौवन पर था, तो अचानक पेशवा हाथी से उतरकर घोड़े पर सवार हो गये और प्रत्यक्ष युद्ध करने लगे।

जैसे ही सैनिकों ने देखा कि पेशवा का हाथी तो है; लेकिन उस पर सेनापति दिखायी नहीं दे रहे, उनका मनोबल टूट गया। उनमें भगदड़ मच गयी और जीतता हुआ युद्ध हिन्दू सेना हार गयी। इस युद्ध ने भारत के इतिहास की धारा ही बदल दी।

इसके विपरीत शिवाजी महाराज ने जब स्वराज्य की स्थापना की, तो देश के सर्वसामान्य व्यक्तियों में देशप्रेम की भावना और नेतृत्वक्षमता उत्पन्न की। इसका परिणाम बहुत अच्छा रहा।

शिवाजी के देहांत के बाद औरंगजेब स्वयं एक विशाल सेना लेकर हिन्दू राज्य को कुचलने के लिए दक्षिण में आया। उसने शिवाजी के बड़े पुत्र संभाजी को मरवा दिया और दूसरे पुत्र राजाराम को जिंजी के किले में घेर लिया। सम्पूर्ण राज्य और सेना नेतृत्वविहीन हो गयी।

लेकिन इसके बाद भी जनता ने हिम्मत नहीं हारी। औरंगजेब की विशाल मुसलमान सेना बीस साल तक संघर्ष करती रही; पर वह स्वराज्य को कुचल नहीं सकी। एक बार तो हिन्दू सैनिक औरंगजेब की शाही छावनी में घुस गये और उसके निजी तम्बू का सोने से बना कलश काटकर ले गये। औरंगजेब इससे इतना निराश और हताश हुआ कि वह दक्षिण में ही मर गया।

यह शिवाजी की बुद्धिमत्ता ही थी कि उन्होंने व्यक्तिगत नेतृत्व के बदले सामूहिक नेतृत्व विकसित किया। उसी का यह सुपरिणाम था।

व्यापार का आधार सच

आजकल चारों ओर भ्रष्टाचार का बोलबाला है। लोगों की यह धारणा बन गयी है कि ईमानदारी से व्यापार नहीं हो सकता। श्री गुरुजी के विचार में ईमानदारी से काम करने पर प्रारम्भ में कुछ समय कठिनाई होती है; पर फिर सदा सफलता ही मिलती है।

श्री गुरुजी नागपुर के एक व्यापारी का उदाहरण देते थे। उसकी दुकान पर दिन भर भीड़ लगी रहती थी। पूछने पर उसने बताया कि वह अपनी दुकान पर सदा साफ माल बेचता है और उनका मूल्य भी समुचित रखता है। ग्राहक चाहे छोटा बच्चा हो या बड़ा आदमी, दाम और माल में कोई फर्क नहीं होता।

इस कारण शुरू में उसे अनेक परेशानियां झेलनी पड़ीं। घर वालों तथा अन्य व्यापारियों ने भी हतोत्साहित किया; पर उसने अपना ईमानदारी का व्यवहार नहीं छोड़ा। परिणाम यह हुआ कि अब उसकी दुकान पर पूरे बाजार से अधिक भीड़ रहती है। लोग उससे उधार सामान भी ले जाते हैं; पर किसी ने उसका पैसा नहीं मारा।

निःसंदेह सच की शक्ति बहुत है; पर उसे अपना प्रभाव जमाने में समय लगता है। लेकिन एक बार उसकी सुगंध फैली, तो वह सदा के लिए लाभ देती है।

.....

दूसरे का अन्न

सामाजिक कार्य करते समय भी प्रायः बहुतों के मन में अपने-पराये का विचार रहता है। इस संबंध में सही दृष्टिकोण समझाने के लिए श्री गुरुजी ने एक बार यह घटना सुनायी।

एक बार श्री गुरुजी किसी स्थान पर एक प्रतिष्ठित सज्जन से मिलने गये, उनके साथ कुछ स्थानीय कार्यकर्ता भी थे। चलते समय एक कार्यकर्ता ने उन सज्जन से कहा - कल श्री गुरुजी मेरे घर भोजन करने आयेंगे, मेरी प्रार्थना है कि आप भी पधारें।

वे सज्जन बोले - आपका निमन्त्रण मेरे लिए प्रसन्नता की बात है; पर मेरा नियम है कि मैं दूसरे का अन्न नहीं खाता। इसलिए मैं नहीं आ सकूँगा। यह सुनकर श्री गुरुजी ने कहा - दूसरे का अन्न न खाने का नियम मेरा भी है।

यह सुनकर सब चौंक गये। इस पर श्री गुरुजी ने समझाया - मैं कल जिनके घर भोजन के लिए जाने वाला हूँ, वे हिन्दू हैं और संघ के स्वयंसेवक भी। फिर वे पराये कैसे हो गये ? और जब वे पराये नहीं हैं, तो उनके घर का अन्न मेरे लिए पराया कैसे हो गया ?

बात सबकी समझ में आ गयी। हिन्दू समाज का एक-एक व्यक्ति अपने सगे भाई जैसा है। यह भाव मन में रहने पर ही हम समाज का कार्य करने में सफल हो पायेंगे।

.....

मनोबल का महत्त्व

कई लोग शरीर से तो बहुत बलशाली होते हैं; पर मनोबल न होने के कारण वे प्रायः कुछ कर नहीं पाते। श्री गुरुजी काशी में पढ़ते समय एक महीने के विशेष अध्ययन के लिए प्रयाग गये थे। इस बारे में उस समय का एक अनुभव वे सुनाते थे।

प्रयाग विश्वविद्यालय में उस समय एक पहलवान छात्र भी पढ़ रहा था। उसने कुश्ती में अनेक पदक पाये थे। वहीं एक दुबला-पतला, पर बहुत चुस्त व फुर्तीला बंगाली युवक भी था। वह प्रायः शांत भाव से अपने अध्ययन में लगा रहता था।

एक बार उन दोनों में किसी बात पर झगड़ा हो गया। अपने स्वभाव के अनुरूप पहले तो वह बंगाली युवक शांत ही रहा; पर जब बात बहुत आगे बढ़ गयी, तो उससे नहीं रहा गया। उसने पहलवान के मुँह पर एक जोरदार थप्पड़ जड़ दिया। केवल इतने पर ही वह नहीं रुका। उसने पहलवान पर घूँसों की बरसात भी कर दी।

पहलवान युवक भौचक रह गया। उसके पास शरीर-बल तो था; पर मनोबल नहीं। बंगाली युवक ने उसे धक्का देकर नीचे गिरा दिया और उसके सीने पर चढ़ बैठा। पहलवान के पाँव उखड़ गये, उसने जैसे-तैसे स्वयं को छुड़ाया और मैदान छोड़कर भाग गया।

स्पष्ट है कि शरीर-बल के साथ मनोबल होना भी बहुत आवश्यक है। बिना मनोबल के शरीर-बल का कोई महत्त्व नहीं है।

.....

नकल से सफलता नहीं

महापुरुषों का जीवन पढ़कर उनके गुण अपने जीवन में उतारना तो ठीक है; पर यदि उनके रंग-रूप की नकल करने का प्रयास किया, तो प्रायः हँसी ही बनती है।

एक बार किसी कार्यकर्ता ने शिवाजी के विश्वस्त साथी तानाजी मालसुरे की जीवनी पढ़ी। वह उससे बहुत प्रभावित हुआ। उसने विचार किया जिस गाँव में मुझे नयी शाखा स्थापित करनी है, यदि वहाँ मैं तानाजी जैसे कपड़े पहनकर जाऊँ, तो लोग शीघ्र आकर्षित होंगे और मेरा कार्य सरल हो जाएगा।

उसने वहाँ खबर भिजवा दी कि कल शाम को मैं तानाजी बनकर गाँव में आऊँगा। अगले दिन उसने किराये पर एक घोड़ा, सैनिक के कपड़े, पगड़ी, तलवार आदि ली और सजधज कर घोड़े पर बैठकर गाँव की ओर चल दिया। गाँव दूर था, अतः वहाँ पहुँचने में तीन-चार घंटे लग गये।

गाँव में खबर थी ही, लोग चौपाल पर एकत्र थे। सबने ताली बजाकर उसका स्वागत किया। गाँव के मुखिया ने उनके गले में माला डालकर कहा - आइये महाराज उतरिये, मेरे घर चलिये।

पर वह नकली 'तानाजी' घोड़े से उतरे कैसे ? उसे घोड़े पर बैठने का अभ्यास तो था नहीं। अतः चार घंटे की सवारी से उसकी टाँगे जाम हो गयीं। उन्होंने सीधी होने से मना कर दिया।

मुखिया जी समझ गये। उन्होंने कुछ लोगों की सहायता से उन्हें घोड़े से उतारा। वे जिस स्थिति में घोड़े पर बैठे थे, उसी स्थिति में उतर कर खड़े हो गये। चार कदम चलना भी उनके लिए संभव नहीं था। मुखिया जी ने कई दिन तक उनकी टाँगों की सिकाई और मालिश करवायी, तब वे सामान्य स्थिति में आये।

स्पष्ट है कि समाज के काम में महत्त्व मन की भावना का है, नकल का नहीं।

.....

लगातार काम करने से लाभ

कुछ लोग स्थिर होकर किसी काम को नहीं करते, इसलिए उन्हें कभी सफलता भी नहीं मिलती। जबकि सफलता के लिए लगातार काम करना जरूरी है।

श्री गुरुजी अपने प्रवास के दौरान एक कार्यकर्ता के घर में ठहरे थे। उस घर में एक छात्र भी रहता था। परीक्षा का समय निकट था; पर उसने साल भर कुछ खास पढ़ाई नहीं की थी। उसने गुरुजी को देखकर सोचा कि ये दाढ़ी वाले सज्जन अवश्य कोई सिद्ध संन्यासी होंगे। ये शायद कोई उपाय बता दें। वह समय निकालकर गुरुजी के पास आया और बोला - मुझे किसी काम में सफलता नहीं मिलती, क्या आप कोई उपाय बता सकते हैं ?

गुरुजी ने मन की एकाग्रता के लिए आसन-प्राणायाम जैसी कुछ विधियाँ बतायीं। उसने पूछा - इन्हें कितने दिन तक करना होगा ? गुरुजी ने कहा - यदि लाभ हो तो फिर सदा ही करते रहो। इस पर उसका मुँह लटक गया। बोला - यह तो बहुत कठिन है। मैं किसी काम को लगातार नहीं कर सकता।

श्री गुरुजी ने हँसकर कहा - तो फिर सफलता की आशा मत करो। सफलता के लिए लगातार काम करना जरूरी है।

.....

श्रीकृष्ण का आत्मविश्वास

यदि मन में आत्मविश्वास हो, तो अधिकांश बाधाएँ काम प्रारम्भ करने से पूर्व ही दम तोड़ देती हैं।

जब पांडवों ने अपना बारह वर्ष का वनवास और एक वर्ष का अज्ञातवास सफलतापूर्वक पूरा कर लिया, तो उन्होंने कौरवों से अपना राज्य वापस माँगा; पर कौरवों ने उन्हें राज्य नहीं दिया। पांडवों ने अनेक तरह से उन्हें समझाने का प्रयास किया; पर वे नहीं माने। अंततः युद्ध करने का ही निश्चय हुआ।

युद्ध से पूर्व अंतिम प्रयास के रूप में पांडवों की ओर से श्रीकृष्ण ने एक बार फिर कौरवों के पास जाने की इच्छा व्यक्त की। युधिष्ठिर के मन में भय जाग गया। वे बोले – हे कृष्ण ! आप तो हमारे सबसे बड़े हितैषी और मित्र हैं। आपके बल पर ही हम यह युद्ध मोल ले रहे हैं। यदि दुर्योधन ने आपको ही बन्दी बना लिया या मार डाला, तो हमारा क्या होगा ?

श्रीकृष्ण हँसकर बोले – यदि ऐसा हुआ, तो फिर तुम्हें युद्ध करने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। मैं अकेला ही उसके सारे भाइयों और सेना को पराजित कर दूँगा।

श्री गुरुजी इस प्रसंग को सुनाकर बताते थे कि हमारे मन में भी ऐसा ही प्रबल आत्मविश्वास होना चाहिए।

.....

श्रेय किसको ?

प्रायः लोग काम के समय तो पीछे रहते हैं; पर श्रेय लेने के लिए सबसे आगे खड़े दिखायी देते हैं। श्री गुरुजी संघ के सरसंघचालक थे। सब लोग उन्हें संघ का सर्वेसर्वा मानते और कहते थे। पर उनके मन में ऐसा कोई अहंकार नहीं था। एक बार इस संबंध में उन्होंने यह कथा सुनायी।

एक व्यक्ति अपने ऊँट को लेकर कहीं जा रहा था। कुछ दूर चलने के बाद उसने ऊँट के गले में बंधी रस्सी छोड़ दी, फिर भी ऊँट अपने मार्ग पर ठीक से चलता रहा। रस्सी को जमीन पर घिसटता देखकर एक चूहा आया और वह उस रस्सी को पकड़कर ऊँट के साथ-साथ चलने लगा।

थोड़ी देर बाद चूहे ने अहंकार से ऊँट की ओर देखा और कहा – तुम अपने को बहुत शक्तिशाली समझते हो; पर देखो, इस समय मैं तुम्हें खींचकर ले जा रहा हूँ। यह सुनकर ऊँट हँसा और उसने अपनी गर्दन को जरा सा हिलाया। ऐसा करते ही चूहा दूर जा पड़ा।

यह कथा सुनाकर श्री गुरुजी ने कहा – ऐसे ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ नामक अपना यह विशाल संगठन है। इसकी रस्सी का एक छोर पकड़कर यदि मैं यह कहूँ कि मैं इसे चला रहा हूँ, तो यह मेरी नहीं, चूहे जैसी क्षुद्र बुद्धि वाले किसी व्यक्ति का कथन होगा।

वस्तुतः संघ सब स्वयंसेवकों की सामूहिक शक्ति से चल रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि हम इसमें और अधिक बुद्धि और शक्ति लगायें। यही हम सबका कर्तव्य है।

.....

शुद्ध उच्चारण आवश्यक है

श्री गुरुजी कार्यकर्ताओं के साथ वार्तालाप में छोटी-छोटी बातों पर बहुत ध्यान दिया करते थे। उनका प्रार्थना के शुद्ध उच्चारण पर बहुत जोर रहता था। गलत उच्चारण से क्या दुष्परिणाम हो सकता है, इसके लिए वे यह प्राचीन कथा सुनाते थे।

एक बार देवता अपने वृद्ध पुरोहित से किसी बात पर नाराज हो गये। नाराजगी इतनी अधिक हो गयी कि उन्होंने पुरोहित की हत्या ही कर दी। देवताओं के राजा इन्द्र ने इस कार्य का नेतृत्व किया था। इस कारण पुरोहित के पुत्र ने इन्द्र से बदला लेने की ठान ली।

पुरोहित के पुत्र ने एक विशाल यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञ की समाप्ति पर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। उन्होंने पुरोहित के पुत्र से मनचाहा वर माँगने को कहा। पुरोहित के पुत्र ने इन्द्र से अपनी शत्रुता की बात बताते हुए कहा – मैं ऐसा पुत्र चाहता हूँ, जो *'इन्द्रशत्रु'* अर्थात इन्द्र को मारने वाला हो।

पर उसने बोलते समय *'इन्द्र'* के नाम पर अधिक जोर दिया और *'शत्रु'* शब्द को धीरे से बोला। इस पर ब्रह्मा जी हँसे और 'तथास्तु' कहकर विदा हो गये। समय आने पर उसे एक अति बलशाली पुत्र की प्राप्ति हुई। पुरोहित के पुत्र ने सोचा कि अब शीघ्र ही मेरी इच्छा पूरी होगी। मेरा बेटा इन्द्र को मारकर अपने दादा जी की हत्या का बदला अवश्य लेगा। पर जब उस पुत्र ने बड़े होकर इन्द्र को चुनौती दी, तो युद्ध में मामला उलट गया। इन्द्र ने उसे ही मार डाला।

वास्तव में वरदान माँगते समय *'इन्द्र'* शब्द को अधिक जोर से बोलने के कारण इन्द्र प्रभावी हो गये; पर *'शत्रु'* शब्द धीरे से बोलने के कारण इन्द्र का शत्रु अर्थात पुरोहित का वह पौत्र कमजोर ही रह गया। इसलिए युद्ध में इन्द्र विजयी रहे।

इस कथा का अर्थ यह है कि प्रार्थना बोलते समय उसका उच्चारण ठीक होना चाहिए तथा उसके भावार्थ को भी समझना जरूरी है।

.....

देशभक्ति और पैसा

प्रायः लोग समझते हैं कि पैसे से लोगों में देशभक्ति जाग्रत की जा सकती है; पर श्री गुरुजी इस विचार के समर्थक नहीं थे। उनका मानना था कि देशभक्ति श्रद्धा का विषय है। उसे पैसे से प्राप्त नहीं किया जा सकता।

१९६५ में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण कर दिया। युद्ध के दौरान पाकिस्तान ने अपने कुछ छतरीधारी सैनिकों को पंजाब में उतार दिया। यह सूचना मिलते ही सरकार ने घोषणा की कि जो कोई उन सैनिकों को पकड़वायेगा, उसे नकद पुरस्कार दिया जायेगा।

श्री गुरुजी ने नेताओं से कहा कि यह युद्ध का समय है। इस समय प्रत्येक नागरिक में देशभक्ति की भावना हिलोरें ले रही है। अतः हमें जनता से यह आह्वान करना चाहिए कि इन दुश्मनों को पकड़ना हमारा कर्तव्य है। पैसे का लालच देकर लोगों की भावना को हल्का नहीं करना चाहिए।

यदि पैसे के लालच में लोग दुश्मन सैनिकों को पकड़ेंगे, तो हो सकता है कि पैसे के लालच में वे उन्हें छोड़ भी दें। देशभक्ति को पैसे से तोलना ठीक नहीं है।

.....

निरर्थक ज्ञान

ऐसे ज्ञान का कोई लाभ नहीं, जिसके साथ बुद्धि और विवेक न हो। इसे समझाने के लिए श्री गुरुजी ने एक बार यह कथा सुनायी।

रामकृष्ण परमहंस ने अपने शिष्यों से वार्तालाप में एक बार बताया कि ईश्वर द्वारा बनायी गयी इस सृष्टि के कण-कण में परमेश्वर का वास है। अतः प्रत्येक जीव के लिए हमें अपने मन में आदर एवं प्रेम का भाव रखना चाहिए।

एक शिष्य ने इस बात को मन में बैठा लिया। कुछ दिन बाद वह कहीं जा रहा था। उसने देखा कि सामने से एक हाथी आ रहा है। हाथी पर बैठा महावत चिल्ला रहा था – सामने से हट जाओ, हाथी पागल है। वह मेरे काबू में भी नहीं है।

शिष्य ने यह बात सुनी; पर उसने सोचा कि गुरुजी ने कहा था कि सृष्टि के कण-कण में परमेश्वर का वास है। अतः इस हाथी में भी परमेश्वर होगा। फिर वह मुझे हानि कैसे पहुँचा सकता है ? यह सोचकर उसने महावत की चेतावनी पर कोई ध्यान नहीं दिया।

जब वह हाथी के निकट आया, तो परमेश्वर का रूप मानकर उसने हाथी को साष्टांग प्रणाम किया। इससे हाथी भड़क गया। उसने शिष्य को सूंड में लपेटा और दूर फेंक दिया। शिष्य को बहुत चोट आयी। वह कराहता हुआ रामकृष्ण परमहंस के पास आया और बोला – आपने जो बताया था, वह सच नहीं है। यदि मुझमें भी वही ईश्वर है, जो हाथी में है, तो उसने मुझे फेंक क्यों दिया ?

परमहंस जी ने हँस कर पूछा – क्या हाथी अकेला था ? शिष्य ने कहा – नहीं, उस पर महावत बैठा चिल्ला रहा था कि हाथी पागल है। उसके पास मत आओ।

इस पर परमहंस जी ने कहा – पगले, हाथी परमेश्वर का रूप था, तो उस पर बैठा महावत भी तो उसी का रूप था। तुमने महावत रूपी परमेश्वर की बात नहीं मानी, इसलिए तुम्हें हानि उठानी पड़ी।

कथा का अभिप्राय यह है कि बड़ों की बात में निहित विचार को ग्रहण करना चहिए। केवल शब्दों को पकड़ने से काम नहीं चलता।

.....

पराजित का तत्त्वज्ञान

कोई बात कितनी भी ठीक हो; पर यदि उसे कहने वाला दुर्बल है, तो उसकी बात नहीं सुनी जाती। इस संबंध में श्री गुरुजी ने एक बार जापान का यह प्रसंग सुनाया।

भारत के प्रसिद्ध कवि एवं साहित्यकार रविन्द्रनाथ टैगोर एक बार जापान के प्रवास पर गये। वहाँ उन्हें एक विश्वविद्यालय के छात्रों के सम्मुख भारतीय विचार एवं तत्त्वज्ञान की श्रेष्ठता पर भाषण देना था।

विश्वविद्यालय के प्रबन्धकों ने सभी छात्रों को कार्यक्रम में आने की सूचना दी थी। छात्रावास भी वहीं आसपास ही थे; पर आश्चर्य कि एक भी छात्र भाषण सुनने के लिए वहाँ नहीं आया। कार्यक्रम स्थल पर केवल रविन्द्रनाथ टैगोर और आयोजक ही उपस्थित थे।

बाद में जब छात्रों से न आने का कारण पूछा गया, तो उन्होंने स्पष्ट उत्तर दिया – गुलाम देश के नागरिक से हम उनके विचार की श्रेष्ठता की बात कैसे सुन सकते हैं। यदि उनका तत्त्वज्ञान श्रेष्ठ है, तो वे अपने देश को स्वतन्त्र क्यों नहीं करा लेते ?

.....

सजगता का महत्त्व

यदि कोई व्यक्ति दुर्बल हो, तो आसपास के लोग उसे बिना बात ही परेशान करने लगते हैं। यही बात किसी कमजोर समाज या देश के लिए भी सत्य है। इसलिए हमें सदा सावधान और संगठित रहना चाहिए। संघ अपनी शाखाओं के माध्यम से यही कार्य कर रहा है। इसे समझाने के लिए श्री गुरुजी एक प्रसंग सुनाते थे।

जब वे छात्रावास में रहते थे, तो अपने कमरे से बाहर जाते समय वे कमरे में ताला डाल देते थे। एक बार उनके साथियों ने इस बारे में पूछा, तो उन्होंने कहा – मेरे कमरे में कोई ऐसी कीमती वस्तु नहीं है, जिसके चुराये जाने का खतरा हो। फिर आप सब मित्रों पर भी मुझे पूरा विश्वास है। लेकिन यदि कमरा खुला रहे, तो

अच्छे व्यक्ति के मन में भी कभी-कभी बुरे विचार आ जाते हैं। इसलिए मैं ऐसा करता हूँ। ताला चोरों के लिए नहीं है। वह तो इसलिए है कि कहीं सज्जन ही चोर न बन जायें।

इस उदाहरण को सुनाकर श्री गुरुजी बताते थे कि जिन देशों की सीमाओं पर सुरक्षा का उचित प्रबन्ध नहीं होता, उसकी धरती पर पड़ोसी देश कब्जा कर लेते हैं।

श्री गुरुजी की चेतावनी शत-प्रतिशत सत्य सिद्ध हुई है। हमारी दुर्बलता के कारण चीन, पाकिस्तान और बांग्लादेश ने हमारी लाखों वर्ग किलोमीटर भूमि दबा रखी है; पर हम उदासीन होकर सब चुपचाप सह रहे हैं।

.....

अपने देश को न भूलें

कुछ लोग वैश्विक समस्याओं के समाधान में हर समय स्वयं को व्यस्त रखते हैं। ऐसे लोगों से श्री गुरुजी कहते थे कि विश्व के साथ-साथ अपने देश के बारे में भी सोचना चाहिए। इसे समझाने के लिए वे एक कथा सुनाते थे।

खगोल-शास्त्र के एक प्रसिद्ध विद्वान थे। प्रायः रात में वे चन्द्रमा, तारों आदि का अध्ययन करते रहते थे। एक बार वे आकाश की ओर देखते हुए चल रहे थे और साथ में नक्षत्रों का अध्ययन भी कर रहे थे। अचानक चलते-चलते वे एक सूखे कुएँ में गिर गये। चोट और दर्द से कराहते हुए वे सहायता की पुकार करने लगे।

कुछ देर बाद वहाँ से गुजर रहे लोगों ने उनकी आवाज सुनी, तो उन्हें निकाला। दुर्घटना का कारण पूछने पर वे बोले - मैं आकाश की ओर देखने में इतना तल्लीन था कि धरती का ध्यान ही नहीं रहा।

ऐसे ही जो लोग दुनिया भर की चिन्ता में व्यस्त रहते हैं, यदि वे अपने देश की समस्याओं की ओर ध्यान नहीं देंगे, तो उनका हाल भी उन्हीं विद्वान की तरह होगा।

.....

बालपन के संस्कारों का महत्त्व

आजकल इतिहास को ठीक से लिखने का प्रयास कुछ देशभक्त विद्वानों द्वारा हो रहा है। इसका विरोध वे लोग कर रहे हैं, जो भारत को अनपढ़ और अंधविश्वासी लोगों का देश मानते हैं। जबकि सच यह है कि भारत देश लाखों वर्ष पुराना है। हमारा इतिहास गौरवशाली रहा है। लगभग एक हजार साल के जिस कालखंड को पराजय का बताया जाता है, वह भी गुलामी का नहीं अपितु सतत् संघर्ष का कालखंड है।

श्री गुरुजी की मान्यता थी कि इतिहास को इसी दृष्टिकोण से पढ़ाना चाहिए। इससे नयी पीढ़ी के मन में देश के प्रति गौरव का भाव जाग्रत होगा। पर यदि उन्हें पराजय और गुलामी जैसी गलत बातें ही पढ़ाई जाएँगी, तो उनके मन में हीनभाव पैदा होगा। अर्थात् वे छोटी अवस्था से ही बच्चों के मन में सही संस्कार डालने के समर्थक थे। इस संबंध में वे एक कथा सुनाते थे।

एक राजा के दरबार में पक्षी बेचने वाला व्यापारी आया। उसके पास देश-विदेश के बहुमूल्य पक्षी थे। उनमें से दो तोते तो बहुत ही बुद्धिमान थे। व्यापारी ने बताया कि ये दोनों जो भी सुनते हैं, उसे शीघ्र ही याद कर लेते हैं। राजा ने दोनों तोते खरीद लिये। एक उसने अपने द्वारपाल को तथा दूसरा अपने पुरोहित को दे दिया।

कुछ समय बाद राजा को उन दोनों तोतों की याद आयी। उसने उन्हें मँगवाया, तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ। एक तोता सुन्दर श्लोक और हरिनाम बोल रहा था, जबकि दूसरा गन्दी गालियाँ बक रहा था।

राजा ने पहले तोते से इसका कारण पूछा। उसने बताया कि मैं पुरोहित जी के घर पर रहा। वे अपने पास आने वालों को अच्छे श्लोक और भगवान की कथा सुनाते थे, इस कारण मैं भी वही सब सीख गया। मेरे साथी को आपने द्वारपाल को दिया था। वह आने वालों से सदा गाली-गलौच से बात करता था, इसलिए उसे वही

चीजें याद हो गयीं। यह दोष मेरे साथी तोते का नहीं अपितु उस द्वारपाल का है, जिसके पास उसे रखा गया था।

स्पष्ट है कि संस्कारों का बहुत महत्त्व है। जो बात बचपन में मन मस्तिष्क में बैठा दी जाये, वह लम्बे समय तक याद रहती है। इसीलिए बच्चों को सही इतिहास ही पढ़ाया जाना चाहिए।

.....

संकटों का भी स्वागत

संघ-कार्य करने वालों को अनेक बाधाओं और संकटों का सामना करना पड़ता है। लोग तरह-तरह से उन्हें परेशान करते हैं; पर जिसके मन में अपने लक्ष्य के प्रति अविचल श्रद्धा रहती है, वह इन सब पर विजय पाकर सफल होता है।

संत तुकाराम जी हर समय भगवान के ध्यान में डूबे रहते थे। लोग इस कारण उनकी बहुत निन्दा करते थे और उनके रास्ते पर काँटे बिखेर देते थे। उनकी झगड़ालू पत्नी भी उन्हें गालियाँ देती रहती थी। उनकी दुकान चौपट हो गयी; पर तुकाराम जी विचलित नहीं हुए। वे इन संकटों के लिए भी ईश्वर को धन्यवाद ही देते थे।

ऐसा कहते हैं कि उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर ईश्वर ने उनके लिए विमान भेजा और वे इसी शरीर के साथ स्वर्ग चले गये।

.....

झूठ और सच

श्री गुरुजी की मान्यता थी कि यदि नयी पीढ़ी को अपने देश का गलत इतिहास पढ़ाया जाएगा, तो वे सदा भ्रमित ही रहेंगे। गलत बात को भी बार-बार सुनने से कैसे भ्रम उत्पन्न होते हैं, इस बारे में वे यह कथा सुनाते थे।

एक सरल स्वभाव के ग्रामीण ने बाजार से एक बकरी खरीदी। उसने सोचा था कि इस पर खर्च तो कुछ होगा नहीं; पर मेरे छोटे बच्चों को पीने के लिए दूध मिलने लगेगा। इसी सोच में खुशी-खुशी वह बकरी को कंधे पर लिये घर जा रहा था।

रास्ते में उसे तीन ठग मिल गये। उन्होंने उसे मूर्ख बनाकर बकरी हड़पने की योजना बनायी और उसके गाँव के रास्ते में थोड़ी-थोड़ी दूरी पर खड़े हो गये। जब पहले ठग को वह ग्रामीण मिला, तो ठग बोला - भैया, इस कुतिया को क्यों पीठ पर उठाये ले जा रहे हो ?

ग्रामीण ने उसकी ओर उपेक्षा से देखकर कहा - अपनी आँखों का इलाज करा लो। यह कुतिया नहीं, बकरी है। इसे मैंने आज ही बाजार से खरीदा है। ठग हँसा और बोला - मेरी आँखें तो ठीक हैं, पर गड़बड़ तुम्हारी आँखों में लगती है। खैर, मुझे क्या फर्क पड़ता है। तुम जानो और तुम्हारी कुतिया।

ग्रामीण थोड़ी दूर और चला कि दूसरा ठग मिल गया। उसने भी यही बात कही - क्यों भाई, कुतिया को कंधे पर लादकर क्यों अपनी हँसी करा रहे हो। इसे फेंक क्यों नहीं देते ?

अब ग्रामीण के मन में संदेह पैदा हो गया। उसने बकरी को कंधे से उतारा और उलट-पलटकर देखा। पर वह थी तो बकरी ही। इसलिए वह फिर अपने रास्ते पर चल पड़ा।

थोड़ी दूरी पर तीसरा ठग भी मिल गया। उसने बड़ी नम्रता से कहा - भाई, आप शक्ल-सूरत और कपड़ों से तो भले आदमी लगते हैं; फिर कंधे पर कुतिया क्यों लिये जा रहे हैं ?

ग्रामीण को गुस्सा आ गया। वह बोला – तुम्हारा दिमाग तो ठीक है, जो इस बकरी को कुतिया बता रहे हो ? ठग बोला – तुम मुझे चाहे जो कहो; पर गाँव में जाने पर लोग जब हँसेंगे और तुम्हारा दिमाग खराब बतायेंगे, तो मुझे दोष मत देना।

जब एक के बाद एक तीन लोगों ने लगातार एक जैसी ही बात कही, तो ग्रामीण को भरोसा हो गया कि उसे किसी ने मूर्ख बनाकर यह कुतिया दे दी है। उसने बकरी को वहीं फेंक दिया। ठग तो इसी प्रतीक्षा में थे। उन्होंने बकरी को उठाया और चलते बने।

यह कथा बताती है कि गलत बात को बार-बार बताने से बड़ा आदमी भी भ्रम में पड़ जाता है, तो फिर छोटे बच्चों की तो बात ही क्या है ? इसलिए बच्चों को शुरू से ठीक इतिहास पढ़ाया जाना आवश्यक है।

.....

प्रश्न अनेक : उत्तर एक

आज भारत में जाति, भाषा, प्रान्तभेद जैसी अनेक समस्याएँ हैं, जिनके कारण जनजीवन अस्त-व्यस्त रहता है। हिन्दुओं को इनके कारण से भारत में तथा विश्व में भी अपमान सहना पड़ता है। श्री गुरुजी हिन्दुओं के प्रबल संगठन को ऐसी सब बीमारियों की एकमात्र और अचूक दवा बताते थे।

इस संबंध में वे एक रोचक पहेली की चर्चा करते थे। एक राजा ने अपने दरबार में एक पहेली पूछते हुए कहा कि प्रश्न तीन हैं; पर इनका उत्तर एक ही है। प्रश्न हैं – घोड़ा अड़ा क्यों, पान सड़ा क्यों और रोटी जली क्यों ?

जब कोई इसका उत्तर न दे सका, तो राजा ने सबसे बुद्धिमान दरबारी की ओर देखा। उसने कहा – महाराज, इसका उत्तर है : फेरा न था। अर्थात घोड़े के पैरों की मालिश जरूरी है। ऐसे ही पान और रोटी को यदि उलट-पलट नहीं करेंगे, तो पान सड़ जायेगा और रोटी जल जायेगी।

इसी प्रकार भारत की सभी समस्याओं का एकमात्र निदान हिन्दुओं का प्रबल संगठन है।

.....

स्वयं को पहचानें

हिन्दू समाज विश्व का सबसे शक्तिशाली और बुद्धिमान समाज है; पर वह आत्मविस्मृति की बीमारी से ग्रस्त है। इसी कारण विदेशी एवं विधर्मी उस पर रौब दिखाते हैं।

ऐसा इतिहास में पहले भी कई बार हो चुका है। लंका जाने के लिए जब कोई भी समुद्र लाँघने का साहस नहीं कर पा रहा था। तब जाम्बवन्त ने हनुमान को उनकी शक्ति की याद दिलायी। ऐसा होते ही उन्होंने अपने शरीर को बढ़ा लिया और समुद्र लाँघकर सीता माता का पता लगाया।

इसी प्रकार महाभारत युद्ध के समय अर्जुन भी अपने कर्तव्य को भूल गया था। पर भगवान श्रीकृष्ण ने उसे आत्मज्ञान कराया, तो वह रण में उतरा और विजय प्राप्त की।

एक जंगल में एक शेर का बच्चा अपने परिवार से बिछुड़ गया। उसे एक गडरिये ने देखा, तो अपने घर उठा लाया। उसकी भेड़ों के बीच वह भी पलने लगा। उसकी आदतें भी उन जैसी ही हो गयीं। वह कुत्ते, भेड़िये आदि को देखकर डरने लगा।

एक दिन एक शेर ने भेड़ों के झुंड पर हमला बोला और दो भेड़ों को उठाकर ले जाने लगा। तभी उसकी नजर उस शेर के बच्चे पर पड़ी। वह भी अन्य भेड़ों के साथ डरकर भाग रहा था। शेर ने उसे पकड़ लिया और उससे पूछा कि तू कौन है ?

वह बच्चा तो डर रहा था। उसके मुँह से आवाज ही नहीं निकली। तब शेर उसे नदी के पास लाया और कहा – देख, तेरी और मेरी सूरत एक जैसी है। तू भेड़ का नहीं, शेर का बच्चा है। गरदन उठा, सीना फुला और मुँह खोलकर दहाड़ मार।

जैसे ही शेर के बच्चे ने ऐसा किया, तो उसकी आवाज से जंगल गूँज उठा। अब उसे अपनी वास्तविकता समझ में आयी। उसने भेड़ों का साथ छोड़ा और शेरों के साथ रहने लगा।

यही स्थिति हिन्दू समाज की है। उसे अपनी शक्ति और गौरव का पता ही नहीं है। इस आत्मविस्मृति को मिटाकर उसे अपनी असली स्थिति की याद दिलाने का प्रयास ही संघ कर रहा है।

.....

छोटी-छोटी बातें

शाखा पर नियम से, समय पर और उचित वेश में आना चाहिए। वहाँ होने वाले कार्यक्रमों में पूर्ण मनोयोग से भाग लेना चाहिए....आदि बातों पर श्री गुरुजी का बहुत आग्रह रहता था। कुछ लोग कहते थे कि इन छोटी-छोटी बातों का पालन किया या नहीं, इससे क्या फर्क पड़ता है ? ऐसे लोगों को श्री गुरुजी यह कथा सुनाते थे।

पुराने समय में घोड़ों पर सवार होकर आमने-सामने की लड़ाई होती थी। एक बार दो राज्यों में युद्ध हो रहा था। दोनों की सेनाएँ शक्तिशाली थीं, अतः कई दिन बीतने पर भी निर्णय नहीं हो पाया। एक दिन एक राज्य ने शत्रु सेना पर दो ओर से एक साथ आक्रमण करने का निर्णय लिया। दूसरी ओर से जिस दल को आक्रमण करना था, उसके प्रमुख को सूचना देने के लिए एक घुड़सवार सैनिक को नियुक्त किया गया।

चलते समय उसने देखा कि उसके घोड़े के एक पैर की नाल की एक कील निकल गयी है। उसने इस ओर ध्यान नहीं दिया और चल दिया। उसने अभी आधा रास्ता ही पार किया था कि दो कीलें और ढीली होने से वह नाल ही निकल गयी और घोड़ा गिर पड़ा। घोड़े के गिरते ही वह सैनिक भी लुढ़ककर बेहोश हो गया।

जब उसे होश आया, तो उसने देखा कि घोड़ा मर चुका है। अब सैनिक ने पैदल ही भागना शुरू किया; पर वह निर्धारित समय तक सूचना नहीं पहुँचा सका। इस कारण दोनों ओर से एक साथ आक्रमण करने की योजना विफल हो गयी और वह राज्य हार गया।

जाँच होने पर पता लगा कि पराजय का कारण एक कील थी। यदि वह घुड़सवार लापरवाही न करते हुए नाल में नयी कील ठुकवा लेता, तो पराजय न होती।

स्पष्ट है कि छोटी मानी जाने वाली बातों का भी बहुत अधिक महत्त्व होता है। अतः कभी इनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

.....

जोड़तोड़ से राष्ट्र नहीं बनता

राष्ट्र का अर्थ केवल भूमि का टुकड़ा और उस पर यहाँ-वहाँ से आकर रहने वाले कुछ लोगों का समूह मात्र नहीं है। इस संबंध में श्री गुरुजी द्वारा सुनाया गया यह रोचक प्रसंग उल्लेखनीय है।

एक बार प्राणिविज्ञान के छात्रों को मजाक सूझा। उन्होंने किसी कीड़े का मुँह, किसी का पेट, किसी का पैर और किसी के पंख आदि को जोड़कर एक कीड़े जैसा आकार दे दिया। फिर उसे प्रयोगशाला की मेज पर रख दिया। कुछ देर बाद जब उनके अध्यापक आये, तो छात्रों ने कहा कि यह अजीब सा कीड़ा उन्होंने पकड़ा है। कृपया इसका नाम बताकर इस वर्ग की विशेषताएँ बतायें।

अध्यापक छात्रों का मजाक समझ गये। वे बोले – यह कीड़ा या कीड़ी नहीं, धोखाधड़ी है।

ऐसे ही 'कहीं का ईंट, कहीं का रोड़ा; भानुमती ने कुनबा जोड़ा' जैसी जोड़तोड़ से राष्ट्र नहीं बनते। राष्ट्र के लिए वहाँ के निवासियों का एक इतिहास, एक परम्परा और उस भूमि के प्रति माता जैसा प्रेमभाव होना भी आवश्यक है।

.....

सबल शरीर आवश्यक है

हमें इस शरीर से ही सब कार्य करने हैं, इसलिए यह खूब बलवान होना चाहिए। इस संदर्भ में श्री गुरुजी यह घटना सुनाते थे।

एक बार स्वामी विवेकानंद रेल से कहीं जा रहे थे। उनके एक भक्त ने उन्हें प्रथम श्रेणी का टिकट खरीदकर दिया था। उन दिनों प्रायः प्रथम श्रेणी में अंग्रेज या अंग्रेजों के चाटुकार सेठ आदि ही सफर करते थे। उस डिब्बे में दो अंग्रेज भी थे।

उन अंग्रेजों ने जब भगवा कपड़े पहने एक संन्यासी को देखा, तो अंग्रेजी में उनके बारे में आपस में गन्दी-गन्दी बातें करने लगे। स्वामी जी को अच्छी अंग्रेजी आती थी। वे सब समझ रहे थे; पर उन्होंने चुप रहना ही उचित समझा।

कुछ देर बाद जब एक स्टेशन पर गाड़ी रुकी, तो स्वामी जी पास से गुजर रहे स्टेशन मास्टर से अंग्रेजी में बात करते हुए अपने लिए पानी मँगवाया। यह देखकर वे अंग्रेज हैरान रह गये। जब गाड़ी चली, तो वे स्वामी जी से बात करने लगे।

- आपको अंग्रेजी आती है ?
- हाँ, कुछ-कुछ आती है।
- तब तो हम जो बोल रहे थे, वह आप समझ रहे होंगे ?
- हाँ, अच्छी तरह समझ रहा था।
- फिर आपने उसका विरोध क्यों नहीं किया ?

स्वामी जी ने हँसकर जवाब दिया - मेरा मूर्खों से मिलने का यह पहला अवसर नहीं है।

यह सुनकर वे आगबबूला होकर झगड़ने लगे। स्वामी जी ने अपने कुर्ते की बाँहें चढ़ायीं और उनकी गरदन पकड़कर बोले - चुपचाप बैठ जाओ, अन्यथा गाड़ी से बाहर फेंक दूँगा। तुम दोनों के लिए मैं अकेला ही काफी हूँ।

स्वामी जी की मजबूत भुजाएँ देखकर दोनों का गुस्सा ठंडा हो गया। अगला स्टेशन आने पर वे उतरकर दूसरे डिब्बे में जा बैठे।

.....

पर उपदेश कुशल बहुतेरे

हिन्दुओं की दुर्दशा का एक बड़ा कारण यह है कि अधिकांश लोग दूसरों को उपदेश तो देते हैं; पर स्वयं कुछ करना नहीं चाहते। ऐसे लोगों के पास देश की हर समस्या का समाधान मिलेगा; पर वे चाहते हैं कि अन्य लोग यह कार्य करें। इस बारे में पूज्य डा० हेडगेवार के जीवन का एक मजेदार प्रसंग श्री गुरुजी सुनाते थे।

नागपुर के एक सेठ के घर पर कोई कार्यक्रम था। नगर के अनेक प्रतिष्ठित लोग वहाँ आये थे। सेठ जी ने वहाँ की प्रथा के अनुसार पानदान आगे बढ़ाया। उसमें पान, सुपारी, इलायची, लौंग आदि तो थे; पर चूना नहीं था। चूने के बिना लोग पान नहीं ले सकते थे।

सेठ जी ने मुनीम जी को देखकर आवाज लगायी – जरा चूना लाइये। मुनीम जी ने एक नौकर को कहा – जरा चूना लाओ। उस नौकर ने दूसरे नौकर को कह दिया। इस प्रकार काफी देर तक 'चूना लाओ, चूना लाओ' की पुकार होती रही; पर चूना नहीं आया।

यही स्थिति भारत देश की है; पर संघ ने इस व्यवस्था को बदला है। स्वयंसेवक पहले स्वयं काम करता है, फिर वह अन्यों को उसे करने को कहता है।

.....

कर्तव्यनिष्ठा

काम के प्रति हमारी निष्ठा कैसी हो, इस संबंध में श्री गुरुजी तानाजी मालसुरे के बलिदान की कथा सुनाते थे।

महाराष्ट्र में कोंडाना नामक एक प्रसिद्ध किला है। वह मुगलों के अधिकार में था। एक बार माँ जीजाबाई ने उसे जीतकर देने की इच्छा शिवाजी के सम्मुख प्रकट की। बस, शिवाजी ने ठान लिया कि यह किला जीतना ही है।

पर कोंडाना बड़े दुर्गम स्थान पर बना था। उसे जीतना आसान न था। शिवाजी ने अपने साथियों के नामों पर विचार किया, तो उन्हें तानाजी मालसुरे का नाम ध्यान में आया। वे हर प्रकार का खतरा उठाकर भी काम पूरा करने में निपुण थे।

शिवाजी उन्हें बुलाने के लिए किसी दूत को भेज ही रहे थे कि तानाजी अपने बेटे राघोबा के विवाह का निमन्त्रण देने के लिए स्वयं ही वहाँ आ गये। शिवाजी ने सोचा कि तानाजी की व्यस्तता के कारण अब वे स्वयं कोंडाना जीतने जाएँगे। पर तानाजी ने शिवाजी को निश्चिन्त करते हुए कहा – महाराज, राघोबा का विवाह बाद में होगा, पहले कोंडाना किला जीता जाएगा।

तानाजी ने पुत्र के विवाह का कार्यक्रम स्थगित कर दिया और सेना लेकर आधी रात में कोंडाना दुर्ग पर धावा बोल दिया। भयंकर युद्ध में तानाजी स्वयं मारे गये; पर किला उन्होंने जीत लिया।

युद्ध के बाद शिवाजी ने कहा – गढ़ आया, पर सिंह गया। तानाजी की स्मृति में उस किले का नाम उन्होंने 'सिंहगढ़' कर दिया। कुछ समय बाद तानाजी के पुत्र का विवाह शिवाजी ने स्वयं बड़ी धूमधाम से किया।

.....

मीठी वाणी का महत्त्व

संघ का कार्य करते समय समाज में अनेक लोगों से मिलना पड़ता है। ऐसे समय वाणी का संयम और विवेक बहुत आवश्यक है। हमें सत्य तो बोलना चाहिए; पर उसे किस प्रकार से बोलें, यह ध्यान रखना भी आवश्यक है। इस संबंध में एक बार श्री गुरुजी ने यह कहानी सुनायी थी।

एक राजा ने स्वप्न देखा कि उसके सारे दाँत झड़कर गिर रहे हैं। उसने इसका अर्थ समझने के लिए एक प्रसिद्ध ज्योतिषी को बुलाया। ज्योतिषी ने कहा – राजन, इसका अर्थ है कि आप अपनी आँखों से अपने पुत्र-पौत्रों आदि की मृत्यु देखेंगे।

राजा ने नाराज होकर उसे जेल में डाल दिया। फिर एक अन्य ज्योतिषी को बुलाया गया। उसने स्वप्न का अर्थ बताते हुए कहा – राजन, आपकी आयु बहुत लम्बी है। आप अपने पुत्र-पौत्रों से भी अधिक समय तक जीवित रहेंगे।

राजा ने उसे अनेक पुरस्कार देकर विदा किया। वस्तुतः दोनों ने बात एक ही कही थी; पर दोनों के कहने का ढंग अलग-अलग था। इसलिए अपनी बात कहते समय सही विधि, समय तथा वातावरण का भी ध्यान रखना चाहिए।

पुण्यभूमि भारत

कुछ लोग भारत को धरती का एक टुकड़ा मानते हैं; पर संघ की धारणा यह है कि यह पुण्यभूमि है। यहाँ अनेक बार स्वयं भगवान ने जन्म लिया है, इसलिए इसका कण-कण पावन है। यह समझाने के लिए श्री गुरुजी ने एक बार यह प्रसंग सुनाया।

स्वामी विवेकानंद लगभग चार वर्ष तक विदेश में रहे। वहाँ उन्होंने लोगों के मन में भारत के बारे में व्याप्त भ्रमों को दूर किया तथा हिन्दू धर्म की विजय पताका सर्वत्र फहरायी। जब वे भारत लौटे, तो उनके स्वागत के लिए रामेश्वरम के पास रामनाड के समुद्र तट पर बहुत बड़ी संख्या में लोग एकत्र हुए। उनका जहाज जैसे ही दिखायी दिया, लोग उनकी जय-जयकार करने लगे।

पर स्वामी जी ने जहाज से उतरते ही सबसे पहले भारतभूमि को दंडवत प्रणाम किया। फिर वे हाथों से धूल उठाकर अपने शरीर पर डालने लगे। जो लोग उनके स्वागत के लिए मालाएँ आदि लेकर आये थे, वे हैरान रह गये। उन्होंने स्वामी जी से इसका कारण पूँछा।

स्वामी जी ने कहा – मैं जिन देशों में रह कर आया हूँ, वे सब भोगभूमियाँ हैं। वहाँ के अन्न-जल से मेरा शरीर दूषित हो गया है। अतः मैं अपनी मातृभूमि की मिट्टी शरीर पर डालकर उसे फिर से शुद्ध कर रहा हूँ।

अनोखी हड़ताल

अपने देश में छोटी-छोटी बात पर धरना, प्रदर्शन, हड़ताल करना एक फैशन बन गया है। इससे देश को कितना नुकसान होता है, इसे कोई नहीं सोचता। श्री गुरुजी इनके समर्थक नहीं थे, वे इस संबंध में जापान का एक उदाहरण देते थे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जापान पूरी तरह बरबाद हो गया। उसकी अर्थव्यवस्था चौपट हो गयी; पर थोड़े ही समय में उसने फिर से पहले जैसी उन्नति कर ली। इसका कारण वहाँ के सामान्य नागरिक में व्याप्त देशभक्ति की भावना है।

भारत से जापान की यात्रा पर गये एक नेता जी एक कारखाने में गये। वहाँ श्रमिकों से बात करने पर पता लगा कि वे लोग अपने वेतन आदि से असंतुष्ट थे। नेता जी ने कहा कि ऐसे में आप लोग हड़ताल कर काम ठप्प क्यों नहीं कर देते ? श्रमिकों ने उत्तर दिया – कारखाने का मालिक भी अपना है और देश भी। हड़ताल से दोनों का ही नुकसान होगा, इसलिए हम यह नहीं करते।

नेता जी ने पूछा – फिर आप लोग विरोध प्रदर्शन कैसे करते हैं ? श्रमिकों ने उत्तर दिया – इसके लिए हम अपनी बाँहों पर काली पट्टी बाँधकर काम करते हैं। इससे मालिक हमारी भावना समझ जाता है और समस्या के समाधान का प्रयास करता है।

श्री गुरुजी इस उदाहरण से समझाते थे कि हर नागरिक के मन में देशप्रेम की भावना जाग्रत करने से ही देश की उन्नति संभव है।

सच बोलने की हिम्मत चाहिए

प्रायः लोग किसी भयवश या एक दूसरे की देखादेखी सत्य बोलने से हिचकिचाते हैं। पर निःस्वार्थ एवं निष्कलंक चरित्र वाले बिना किसी भय के अपनी बात कह देते हैं।

एक राजा के दरबार में किसी दूसरे राज्य से एक बुनकर आया। उसने बहुत महीन और कोमल कपड़ा राजा को दिखाया। राजा ने उसे मुँहमाँगा दाम देकर खरीद लिया। यह देखकर उस राज्य के बुनकर को बहुत बुरा लगा। उसने कहा कि यदि उसे छह मास का समय और एक लाख रुपया दिया जाये, तो वह ऐसा महीन कपड़ा बुन सकता है, जैसा आज तक किसी ने न बुना हो।

राजा ने स्वीकृति दे दी। बुनकर ने एक कमरे को चारों ओर से बन्दकर काम शुरू कर दिया। जब लोग वहाँ से गुजरते, तो करघे की आवाज आती। छह मास बाद वह कपड़ा लेकर दरबार में आया। उसने घोषणा कर दी कि यह कपड़ा राजा के अलावा केवल उन्हीं दरबारियों को दिखायी देगा, जो राजा के प्रति निष्ठावान होंगे।

राजा को कपड़ा कहीं दिखायी ही नहीं दे रहा था। फिर भी उसने वाह-वाह की। दरबारियों को भी कपड़ा नहीं दिखा; फिर भी उन्होंने उसकी प्रशंसा की, क्योंकि कोई भी सच बोलकर राजा को नाराज नहीं करना चाहता था। राजा ने घोषणा कर दी कि एक सप्ताह बाद होने वाले उत्सव में वह इन्हीं को पहनकर शामिल होगा।

अब दर्जी को बुलाया गया। बुनकर ने उसे भी अपने साथ मिला लिया था। उसने कपड़े सिलने का नाटक किया। बहुत महीन धागे से राजा के कपड़े तैयार हुए। उन्हें पहनकर वह शान से हाथी पर बैठकर उत्सव के लिए चल दिया।

नगर की प्रजा राजा को निर्वस्त्र देखकर आश्चर्यचकित थी; पर मुँह कौन खोले ? शोभायात्रा बढ़ती जा रही थी; लेकिन एक बच्चे से नहीं रहा गया, वह जोर से चिल्लाया - देखो-देखो, राजा तो नंगा है। उसकी माँ ने उसे चुप कराने का प्रयास किया; पर वह चुप नहीं हुआ।

यह देखकर नागरिकों का साहस जाग गया। वे भी कहने लगे - हाँ, राजा तो नंगा है। अब दरबारियों में भी हिम्मत आ गयी। वे भी बोल उठे - हाँ, राजा तो नंगा है। राजा ने जब सब ओर से एक ही बात सुनी, तो वह शर्म से पानी-पानी होकर राजमहल लौट गया।

यही हालत अपने देश के नेताओं की है। भारत हिन्दू राष्ट्र है। इसे जानते तो सब हैं; पर किसी भय या स्वार्थ के कारण वे यह सच बोलने में संकोच करते हैं। संघ के संस्थापक पूज्य डा० हेडगेवार के मन में न कोई भय था न कोई स्वार्थ। इसलिए उन्होंने पहली बार स्पष्ट शब्दों में उद्घोष किया कि भारत हिन्दू राष्ट्र है।

उनके इस साहस भरे उद्घोष से प्रभावित होकर करोड़ों लोग आज कह रहे हैं - हाँ, भारत हिन्दू राष्ट्र है।

.....

सत्य सदा सम्मानित होता है

आजकल सर्वत्र राजनीति का बोलबाला है। राजनेता हर काम को वोटों के हानि-लाभ से तोलकर करते हैं। वे इस डर से सच नहीं बोलते कि इससे कोई वर्ग नाराज न हो जाये। श्री गुरुजी का विचार था कि ऐसी ढुलमुल भाषा बोलने वाले कुछ समय तक तो लाभ उठा सकते हैं; पर सच बोलने वालों का सदा सम्मान होता है। वे अपने साथ का एक प्रसंग सुनाते थे।

एक बार उन्हें रेल से थोड़ी दूर जाना था। जब रेल आयी, तो वे एक डिब्बे में चले गये। वहाँ मुस्लिम लीग के एक प्रसिद्ध नेता सीट पर अपना बिस्तर लगाये बैठे थे। उन्होंने बड़े आदर से अपना बिस्तर साफ किया और गुरुजी को बैठा लिया।

उनके साथियों ने आश्चर्य से उनकी ओर देखा। एक ने पूछ ही लिया - संघ वाले तो हमारे कट्टर विरोधी हैं। फिर भी आप उनके मुखिया को इतना आदर दे रहे हैं।

मुस्लिम नेता ने कहा - हाँ, ये हमारे विरोधी हैं; पर ये अपनी बात हमेशा साफ-साफ कहते हैं। राजनेताओं की तरह बात को घुमा-फिरा कर नहीं बोलते। इसलिए इनसे हमें कभी धोखा नहीं होगा। जबकि वे राजनेता जो आज वोट के लालच में हमारा समर्थन कर रहे हैं, कल वोट के लिए हमारे विरोधी भी बन सकते हैं।

ईश्वर सर्वत्र है

हरिद्वार से गंगाजल लेकर उससे रामेश्वर में भगवान शंकर का अभिषेक करने का प्राचीन समय से ही बड़ा महत्त्व रहा है। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संत एकनाथ जी अपने कुछ शिष्यों व संतों के साथ गंगाजल लेकर पैदल-पैदल रामेश्वर जा रहे थे।

नगर, ग्राम, जंगल, पर्वत, रेगिस्तान आदि पार करते हुए वे चले जा रहे थे। रेगिस्तान में एक संकट उपस्थित हो गया। सब यात्रियों ने देखा कि मार्ग में एक गधा बुरी तरह धरती पर लोटपोट हो रहा था। उसे देखते ही सब समझ गये कि यह प्यास से तड़प रहा है। यदि उसे पानी न मिला, तो वह कुछ देर में मर जाएगा।

पर यात्रियों के पास तो पानी के नाम पर केवल गंगाजल था। इसलिए सब उसे सहानुभूति से देखते रहे; पर एकनाथ जी ने अपनी काँवड़ उतारी और कलश में रखा सारा गंगाजल गधे को पिला दिया। गधे ने तृप्ति से उनकी ओर देखा और अपनी राह चला गया।

सबने एकनाथ जी को टोका - यह आपने क्या किया; इतने कष्ट एवं परिश्रम से आप जो गंगाजल लाये थे, वह आपने गधे को पिला दिया। अब भगवान को क्या चढ़ायेंगे ?

एकनाथ जी ने कहा - भगवान सर्वत्र है। रामेश्वर के शिवलिंग में जो भगवान हैं, वही इस गधे के अंतकरण में भी है। यदि हम जल होते हुए भी इस मूक प्राणी को प्यासा मरने देते, तो भगवान भोलेशंकर हमें कभी क्षमा नहीं करेंगे।

उनके साथ चल रहे अन्य संत तथा शिष्य एकनाथ जी के हृदय की विशालता देखकर दंग रह गये।

धैर्य बनाये रखें

अनेक लोग काम करते समय बहुत उतावले हो जाते हैं; वे चाहते हैं कि जो भी होना हो, तुरन्त हो जाए। लेकिन कार्यकर्ता के ध्यान में सदा अपना लक्ष्य और सफलता ही रहनी चाहिए। इस सम्बन्ध में श्री गुरुजी छत्रपति शिवाजी का यह प्रसंग सुनाते थे।

बीजापुर के शासक आदिलशाह ने जब देखा कि शिवाजी अपना साम्राज्य बढ़ाते जा रहे हैं, तो उसने कई सूरमाओं को उन्हें परास्त करने भेजा। पर जो भी गया, वह मार खाकर ही लौटा। परेशान होकर आदिलशाह ने अपने सबसे मजबूत योद्धा अफजल खाँ को शिवाजी को जिन्दा या मुर्दा लेकर आने को कहा।

अफजल खाँ विशाल सेना लेकर चल दिया। मार्ग में उसने सैकड़ों मंदिरों को ध्वस्त किया। हजारों गायों की हत्या की। खेतों में खड़ी फसलों को आग लगा दी। महिलाओं को अपमानित किया। लोग शिवाजी को जाकर शिकायत करते थे; पर वे शान्त बैठे रहे।

इससे अफजल खाँ का साहस बढ़ गया। उसने पंढरपुर का प्रसिद्ध विठोबा का मंदिर और शिवाजी की कुलदेवी तुलजा भवानी का मंदिर भी तोड़ डाला। लोग त्राहि-त्राहि करने लगे। कई लोग तो शिवाजी को भला-बुरा भी कहने लगे - कहाँ है वह हिन्दू रक्षक; कहाँ छिपा बैठा है; लगता है वह भी अफजल खाँ से डर गया है ?

पर शिवाजी ने धैर्य नहीं खोया। वे अपनी योजना से चल रहे थे। उन्होंने ऐसा वातावरण बनाया कि अफजल खाँ उनसे मिलने पहाड़ी पर स्थित प्रतापगढ़ के किले तक आ पहुँचा। वहाँ शिवाजी ने उसके पेट में

बघनखा भोंककर उसे यमलोक पहुँचा दिया। केवल इतना ही नहीं, किले के आसपास छिपे सैनिकों ने उसकी सेना के एक आदमी को भी जीवित नहीं छोड़ा।

यदि शिवाजी धैर्य खो देते, तो वे सफल नहीं होते। इसलिए ध्यान सदा अंतिम लक्ष्य और सफलता की ओर ही रखना चाहिए।

.....

दुर्बलता

दुर्बलता का संबंध शरीर से नहीं, मन से होता है। इस संबंध में श्री गुरुजी ने अपने जीवन का यह प्रसंग एक बार सुनाया था।

छात्र-जीवन में माधवराव अपने एक मित्र के साथ घूमने गये। एक सिनेमाघर के बाहर बहुत भीड़ देखकर वे रुक गये। पूछने पर पता लगा कि फिल्म तो समाप्त हो गयी है; पर महिलाओं वाले दरवाजे पर दो अंग्रेज खड़े हैं। उन्होंने शराब भी पी रखी है। वहाँ पुलिस भी थी और सिनेमा का प्रबन्धक भी; पर सब उनसे भयभीत थे।

यह देखकर माधवराव ने अपने मित्र से कहा - चलो, हम चलकर उन्हें हटाते हैं। पर वह मित्र भी डर गया। अब माधवराव ने अकेले वहाँ जाकर पहले तो उन्हें अंग्रेजी में डाँटा; पर जब वे नहीं हटे, तो उन्होंने एक का गला पकड़कर जोर से चाँटा जड़ दिया। चाँटा लगते ही उनका नशा उतर गया और वे वहाँ से भाग गये।

श्री गुरुजी कहते थे कि जब मेरे जैसा दुबला-पतला आदमी उनसे भिड़ सकता है, तो क्या इतना बड़ा भारत अंग्रेजों से नहीं लड़ सकता ? वस्तुतः हमारा शरीर नहीं, मन दुर्बल है। अतः पहले उसकी दुर्बलता दूर करना आवश्यक है।

.....

हमारा लक्ष्य

श्री गुरुजी प्रवास के समय अनेक लोगों से मिलते थे। ऐसे लोग उन्हें संघ के बारे में तरह-तरह के परामर्श देते थे। गुरुजी सबकी बात सुनते थे। जब कार्यकर्ता इस बारे में उनकी प्रतिक्रिया पूछते थे, तो वे यह कथा सुनाते थे।

एक युवक बहुत बुद्धिमान, ओजस्वी वक्ता एवं अति सुंदर था। इतना ही नहीं, वह परिश्रमी एवं अध्ययनशील भी था। उसके परिचित उसे भविष्य के बारे में तरह-तरह के सुझाव देते रहते थे।

एक ने कहा - तुम्हारी भाषणशैली एवं तर्कशक्ति इतनी प्रभावी है कि यदि तुम वकील बनो, तो सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँच जाओगे और बहुत सफलता पाओगे। दूसरे ने कहा - तुम्हारा अध्ययन इतना गहरा है कि तुम्हें प्राध्यापक बनना चाहिए। तुम कई ग्रन्थ लिखकर बड़ा नाम कमा सकते हो।

तीसरे ने सलाह दी - तुम अपनी योजना बनाने की क्षमता का उपयोग यदि व्यापार में करो, तो बहुत पैसा कमा सकते हो। एक प्रौढ़ सज्जन बोले - मेरा परिचय अनेक परिवारों से है, तुम कहो तो किसी धनवान परिवार की सुंदर लड़की से तुम्हारा विवाह करा दूँ।

पर ये चारों बड़े निराश हुए, जब उस युवक ने कहा कि वह संन्यास लेकर समाजसेवा में अपना जीवन लगायेगा। सब लोग उसे समझाने लगे। युवक ने बताया मानव जीवन का उद्देश्य केवल खाना, पीना, कमाना, संतान उत्पन्न करना और मर जाना ही नहीं है। ईश्वर ने हमें केवल इस कार्य के लिए ही धरती पर नहीं भेजा। जीवन का उद्देश्य बहुत व्यापक है।

यही स्थिति संघ की है। संघ की शक्ति एवं विशालता को देखकर लोग अपनी क्षुद्र बुद्धि के अनुसार तरह-तरह के सुझाव देते हैं। वे चेतावनी भी देते हैं कि यदि संघ ने इस कार्य में शक्ति नहीं लगायी, तो वह

निष्क्रिय होकर नष्ट हो जाएगा; पर संघ कभी विचलित नहीं हुआ। क्योंकि हमारा लक्ष्य बहुत बड़ा है। जिन्होंने स्वयं को दीवारों में बंद कर रखा है, वे संघ का महत्त्व नहीं समझ सकते।

.....

हमारे प्रभाव का आधार

वामन भगवान की कहानी हमारे धर्मग्रन्थों में आती है। उनके पास न सेना थी न सत्ता, न धन और न बल। उनका आकार तो बहुत ही छोटा था। फिर भी उन्होंने धरती, आकाश और पाताल अर्थात तीनों लोकों पर अपना प्रभाव स्थापित कर लिया था।

ऐसा कैसे हो गया ? इसका कारण यह था कि उनके पास त्याग, तपस्या, सेवा और विश्व-कल्याण की कामना, यह चार महाव्रत थे। इनके बल पर ही उन्होंने राजा बलि को पराभूत किया।

संघ के बारे में भी लोग ऐसा ही बोलते हैं कि राजनीतिक क्षेत्र में काम करने वाले जनसंघ पर संघ का बहुत प्रभाव है। ऐसे लोगों को श्री गुरुजी कहते थे कि केवल जनसंघ की क्यों, कांग्रेस, कम्युनिस्ट, मुस्लिम लीग आदि राजनीतिक दलों के साथ-साथ सम्पूर्ण विश्व पर भविष्य में संघ का प्रभाव पड़ने वाला है। क्योंकि हमारे पास भी शील, चरित्र, सेवाभाव और ध्येयनिष्ठा जैसे महाव्रत हैं।

.....

कथनी और करनी में समानता

किसी भी सामाजिक काम में कार्यकर्ता की भूमिका बड़ी महत्त्वपूर्ण होती है। यदि उसकी कथनी और करनी एक नहीं होगी, तो कोई उस पर विश्वास नहीं करेगा और उसे कभी सफलता भी नहीं मिलेगी। इस बारे में श्री गुरुजी एक कहानी सुनाते थे।

एक बच्चे को गुड़ खाने की बहुत आदत थी। इस कारण बार-बार वह बीमार हो जाता था। ऐसी ही बीमारी के समय उसके पिता ने एक चिकित्सक को बुलाया। चिकित्सक ने उसे देखकर एक सप्ताह की दवा तो दी; पर गुड़ खाने को मना नहीं किया। अगली बार उन्होंने फिर एक सप्ताह की दवा दी; पर गुड़ खाने को अब भी मना नहीं किया। तीसरी बार उन्होंने दवा देते समय गुड़ की हानियाँ बतायीं। यह सुनकर बालक ने गुड़ खाना बहुत कम कर दिया।

बालक के पिता ने कहा - यदि यह बात आप पहली बार में ही कह देते, तो आपका क्या बिगड़ जाता ? चिकित्सक ने कहा - असल में मैं स्वयं भी बहुत अधिक गुड़ खाता था। इसलिए मेरा कुछ कहने का साहस नहीं हुआ। पर अब मैंने गुड़ खाना छोड़ दिया है। इसलिए आज यह बात कही है।

स्पष्ट है कि जो काम हम स्वयं नहीं करते, उसे करने के लिए दूसरों को किस मुँह से कह सकते हैं ? अच्छा कार्यकर्ता वही है, जिसकी कथनी और करनी एक समान हो।

.....

प्रेम सदा विजयी होता है

संघ की वृद्धि में स्वयंसेवकों के आपसी प्रेम-व्यवहार का बहुत योगदान है। जो भी व्यक्ति एक बार हमारे सम्पर्क में आ जाता है, वह सदा के लिए अपना हो जाता है।

१९५७ की बात है, नागपुर में हो रहे तृतीय वर्ष के वर्ग में एक स्वयंसेवक बहुत बीमार हो गया। उसे चिकित्सालय में भर्ती कराया तथा अच्छी से अच्छी दवा दी गयी; पर उसकी हालत बिगड़ती गयी। यह देखकर

उसके घर वालों को बुलवाया गया। वहाँ व्यवस्था में लगे कार्यकर्ताओं ने उसकी रात-दिन चिन्ता की। इतने पर भी वह बच नहीं सका।

जहाँ से वह आया था, वहाँ संघ-विरोधी लोग भी बड़ी संख्या में थे। उन्होंने यह अफवाह फैला दी कि संघ वालों ने इस युवक को जहर देकर मारा है। इससे गाँव वालों के मन में संघ के प्रति दुर्भावना उत्पन्न हो गयी। पर जब उसके परिवारजन गाँव में पहुँचे, तो उन्होंने बताया कि संघ वालों ने उनकी तथा उनके पुत्र की कितनी चिन्ता की थी। कार्यकर्ता रात-रात भर उसके पास बैठे रहते थे; पर यह प्रभु की इच्छा थी कि हमारा बेटा बच नहीं सका।

यह सुनकर गाँव वालों की आँखें खुल गयीं और संघ-विरोधी लोग वहाँ से भागते नजर आये। वस्तुतः ऐसा प्रेमपूर्ण व्यवहार ही संघ की वृद्धि का आधार है।

.....

क्रांतिवीर तात्याटोपे और वेश्या

सामाजिक कार्यकर्ताओं का आत्मबल और चरित्र उज्ज्वल होना अति आवश्यक है। इससे वे सभी तरह के लोगों की क्षमता का अपने कार्य में उपयोग कर लेते हैं।

१८५७ का स्वतन्त्रता संग्राम चल रहा था। प्रख्यात क्रांतिकारी तात्याटोपे के पीछे अंग्रेज पुलिस पड़ी थी। वे छिपने के लिए जिस घर में घुसे, वह एक वेश्या का था। वेश्या ने जब उन्हें देखा, तो उनके व्यक्तित्व एवं साहस से वह बहुत प्रभावित हुई। उसने अपने स्वभाव के अनुरूप अपना शरीर उन्हें अर्पित करना चाहा।

पर तात्याटोपे वेश्या के मोहजाल में नहीं फँसे। उन्होंने उसे स्पष्ट बता दिया कि उनके जीवन का लक्ष्य शरीर सुख प्राप्त करना नहीं अपितु देश को स्वतन्त्र कराना है। यदि वह उनसे प्यार करती है, तो अपनी सम्पूर्ण धन-सम्पदा को देश हेतु समर्पित कर दे।

वेश्या ने ऐसा ही किया। इतना ही नहीं तो जब तक वह जीवित रही, क्रांतिकारियों को हर प्रकार का सहयोग करती रही। तात्याटोपे ने अपने उज्जवल चरित्र एवं लक्ष्य के प्रति अटूट निष्ठा से वेश्या के मन को भी बदल दिया।

.....

वयं पंचाधिक शतम्

हमारे बीच भले ही कितने मतभेद हों; पर यदि कोई बाहरी संकट आये, तो सबको एकजुट होकर उसका मुकाबला करना चाहिए। इस संबंध में महाभारत का एक प्रसंग श्री गुरुजी सुनाते थे।

जुए में हारने के बाद पांडव अपने बारह वर्ष के वनवास-काल में एक बार द्वैतवन में ठहरे हुए थे। जब दुर्योधन को यह पता लगा, तो उसने उन्हें अपमानित करने के लिए अपने भाइयों के साथ वहाँ जाने का निश्चय किया। उसके आदेश पर सब अच्छे वस्त्र व आभूषण पहनकर अपने वैभव का प्रदर्शन करते हुए चल दिये।

चलते-चलते वे द्वैतवन के सरोवर के पास पहुँचे। वहाँ गंधर्वराज चित्रसेन अपने परिवार सहित ठहरा हुआ था। दुर्योधन के कर्मचारी जब वहाँ डेरे-तम्बू लगाने लगे, तो चित्रसेन ने उन्हें मना किया; पर वे नहीं माने। इस पर उसने दुर्योधन के कर्मचारियों को भगा दिया। यह पता लगने पर दुर्योधन ने युद्ध छेड़ दिया; पर चित्रसेन ने उन्हें पराजित कर बंदी बना लिया।

कुछ सैनिक रोते-चिल्लाते पांडवों के पास जा पहुँचे। दुर्योधन की पराजय सुनकर भीम को बहुत खुशी हुई। वह बोला - बहुत अच्छा हुआ। हमें परेशान करने का उसे अच्छा दंड मिला। अब उसे चित्रसेन की कैद में ही पड़ा रहने दो।

लेकिन युधिष्ठिर ने कहा – दुर्योधन चाहे जैसा भी हो; पर है तो हमारा भाई ही। आपसी संघर्ष में हम सौ और पाँच हैं; पर यदि किसी तीसरे से युद्ध होता है, तो हम एक सौ पाँच हैं (वयं पंचाधिक शतम्)। यह कहकर उन्होंने अर्जुन को भेजकर सबको छुड़वाया।

संघ की मान्यता है कि देश के बारे में हमें सदा धर्मराज युधिष्ठिर के वाक्य को ही आधार बनाकर कार्य करना चाहिए।

.....

हाथी और अंधे

संघ का असली स्वरूप क्या है? यह प्रायः लोग नहीं समझ पाते। शाखा में स्वयंसेवकों को खेलते या गीत गाते देख कुछ लोग इसे खेलकूद या गायन-क्लब समझ लेते हैं। स्वयंसेवकों द्वारा चलाये जाने वाले विद्यालय, चिकित्सालय आदि को देखकर कुछ लोग संघ को सेवा-संस्था मान लेते हैं। पर यह सब संघ का एक पक्ष है। इस संबंध में श्री गुरुजी हाथी और अंधों वाली कथा सुनाते थे।

एक गाँव में कुछ अंधे रहते थे। एक बार वहाँ एक हाथी आ गया। उसके गले में लटके घंटे की टन-टन सुनकर वे अंधे भी उसके पास आ गये और उसे छूकर देखने लगे। हाथी के जाने के बाद वे उसके बारे में चर्चा करने लगे।

जिस अंधे ने हाथी के पैरों को छुआ था, वह बोला कि हाथी खंभे जैसा है। दूसरे ने उसके कान छुए थे, उसने हाथी को पंखे जैसा बताया। सूंड छूने वाले ने उसे तने जैसा और दुम छूने वाले ने रस्सी जैसा बताया।

यही स्थिति संघ को दूर से देखने वालों की है। संघ को ठीक से जानने के लिए शाखा में आना ही एकमात्र उपाय है।

.....

नित्य संस्कार से ही कार्य संभव है

शाखा हो या अन्य कोई सामाजिक कार्य; यदि उसे नित्य करने का संस्कार न हो, तो संकट के समय भी वह नहीं हो पाता। इस बारे में संत तुकाराम के जीवन का एक प्रसंग श्री गुरुजी सुनाते थे।

संत तुकाराम हर समय भगवान के ध्यान में डूबे रहते थे। दूसरी ओर उनकी पत्नी बड़ी झगड़ालू थी। तुकाराम जी के समझाने पर वह कहती थी कि घर-गृहस्थी के इस जंजाल से मुक्ति मिले, तब तो भगवान का भजन करूँ। जब भगवान तुम पर प्रसन्न हों, तो मुझे बुला लेना। मैं भी उनके दर्शन कर लूँगी।

ऐसा कहते हैं कि तुकाराम जी की भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान ने उन्हें लेने के लिए विमान भेजा। तुकाराम ने अपनी पत्नी को आवाज दी; पर वह तो घरेलू कामों में व्यस्त थी। वह बोली – मैं इस समय कैसे चल सकती हूँ। अपनी भैंस को बच्चा होने वाला है, जब तक वह ब्याती नहीं, मैं नहीं जाऊँगी।

बाद में जब उसे पता लगा कि तुकाराम जी इसी शरीर से स्वर्ग चले गये, तो वह बहुत पछतायी; पर अब क्या हो सकता था ?

ऐसे ही अनेक लोग कहते हैं कि हम तो आपके ही हैं। जब आप आवाज देंगे, हम आ जाएंगे; पर सच में ऐसा हो नहीं पाता। परिवार, काम-धंधे और धन-सम्पत्ति का मोह उन्हें ऐसा नहीं करने देता। इसीलिए हर दिन काम करने का संस्कार अति आवश्यक है।

.....

धैर्य एवं वीरव्रत

संघ कार्य करते समय अत्यधिक धैर्य की आवश्यकता होती है। यदि ऐसा न हो, तो प्रायः काम बिगड़ जाता है। इस बारे में शृंगेरी पीठ के शंकराचार्य जी से संबंधित एक कथा श्री गुरुजी सुनाते थे।

शृंगेरी पीठ के निकट स्थित एक टीले पर प्रसिद्ध शिवमंदिर है। एक बार पूज्य शंकराचार्य जी वहाँ पूजा कर रहे थे। अचानक एक भयंकर नाग फुंकारता हुआ वहाँ आ पहुँचा। उनके साथ पूजा कर रहे शिष्य भयभीत हो गये। उन्होंने इशारे से शंकराचार्य जी को नाग के बारे में बताया।

शंकराचार्य जी विचलित नहीं हुए। पूजा सामग्री में दूध से भरी एक कटोरी भी थी। उन्होंने वह नाग के सामने रख दी। नाग दूध पीकर वहाँ से चला गया। सब शिष्य आश्चर्यचकित रह गये।

श्री गुरुजी की मान्यता थी कि संकट के समय धैर्य रखकर रास्ता निकालना तथा अपनी साधना करते रहना ही वीरव्रत है। ऐसे वीरव्रत और धैर्य से ही लक्ष्य की प्राप्ति होती है।

.....

आपत्तियों का भी स्वागत

सामाजिक कार्यकर्ताओं को आराम या प्रतिष्ठा के बदले प्रायः कष्ट तथा अपमान ही सहना पड़ता है; पर सच्चा कार्यकर्ता इन सबका हँसकर स्वागत करता है।

संत तुकाराम जी का जीवन भी ऐसा ही था। उनके मित्रों, रिश्तेदारों और समाज के लोगों ने उनकी निन्दा की। उन्हें पीटा, उनके रास्ते में काँटे बिखेरे। उन्हें धोखा दिया, जिससे उनकी दुकान बन्द हो गयी; पर वे सदा ईश्वर भजन में लगे रहे।

उनकी पहली पत्नी बहुत अच्छे स्वभाव की थी; पर वह कम समय ही जीवित रही। दूसरी पत्नी बहुत कर्कश स्वभाव की थी। इस पर भी तुकाराम जी सदा ईश्वर को धन्यवाद ही देते हुए कहते थे – हे ईश्वर, तेरी बड़ी कृपा है कि ऐसी पत्नी मिली है। इस कारण मुझे सदा तेरा स्मरण बना रहता है।

श्री गुरुजी कहते थे कि सच्चा कार्यकर्ता प्रत्येक कठिनाई को ईश्वर का प्रसाद समझकर स्वीकार करता है। असली सोना अग्निपरीक्षा से कभी घबराता नहीं, क्योंकि उसमें से वह और अधिक खरा होकर निकलता है।

.....

सब समस्याओं का निदान : संघ शाखा

किसी समय चैतन्य महाप्रभु की ख्याति एक श्रेष्ठ विद्वान की थी; पर भक्तिमार्ग अपनाने के बाद उनका विद्वत्ता का सारा अहंकार धुल गया। उनके हृदय में वैराग्य का संचार हुआ तथा उन्हें साक्षात भगवान कृष्ण के दर्शन भी हुए।

अब वे हर समय नाम-संकीर्तन में व्यस्त रहने लगे। उन्होंने भाषण और वाद-विवाद बन्द कर दिये। अब जो भी उनके पास आता, वे उसे 'हरिबोल' कीर्तन करने को कहते। 'हरिबोल : हरिबोल' कहते-कहते वे झूमने लगते और उन्हें समाधि लग जाती थी। उनको इस अवस्था में देखकर अनेक नास्तिक लोग भी आस्तिक बन गये।

यही स्थिति संघ के संस्थापक पूज्य डा० हेडगेवार की थी। उन्होंने भी बहुत सी संस्थाओं और संगठनों के साथ कार्य किया। आंदोलन किये, भाषण दिये, लेख लिखे और समाचार पत्र भी चलाये; पर संघ-स्थापना के बाद उन्होंने सब तरफ से हाथ खींच लिया।

अब यदि कोई व्यक्ति उनके पास अपने क्षेत्र, धर्म या देश की किसी समस्या को लेकर आता, तो वे एक ही सूत्र बताते – सारी शक्ति लगाकर अपनी शाखा को मजबूत करो। इसी से सब समस्याओं का निदान होगा।

श्री गुरुजी कहते थे कि जैसे चैतन्य महाप्रभु के 'हरिबोल' नामक मंत्र ने पूर्वोत्तर भारत में व्यापक चेतना जगायी, ऐसे ही डा० हेडगेवार का 'संघ शाखा' नामक सूत्र पूरे भारत को जाग्रत करने में सक्षम है। आवश्यकता इस बात की है कि हम इस सूत्र के प्रति सच्ची निष्ठा एवं श्रद्धा रखें।

◆◆◆